व्यंग्यार्थकौमुदी

डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री

व्यंग्यार्थकौमुदी

प्रणेता
डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री
प्राध्यापक, संस्कृत-विभाग
फीरोज़ गाँधी स्नातकोत्तर कॉलेज
रायबरेली-(उ०प्र०)

अनुवादक
डॉ० रमापति मिश्र
चित्रकूट-(उ०प्र०)

अक्षयवट प्रकाशन
इलाहाबाद

ISBN 978-81-904891-8-8

व्यंग्यार्थकौमुदी
(हिन्दीपद्यानुवादसंहिता)

प्रणेता :
डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री
© प्रणेता

अनुवादक : डॉ० रमापति मिश्र

प्रथम संस्करण : २००८

मूल्य : तीन सौ रुपये

प्रकाशक :
अक्षयवट प्रकाशन
२६, बलरामपुर हाउस
इलाहाबाद-२११००२

मुद्रक :
दूबे प्रिन्टर्स एण्ड ग्राफिक्स
५० अ, बलरामपुर हाउस
इलाहाबाद-२११००२

अस्मदीयं किञ्चित्

स्वातन्त्र्योत्तरम् अधुनातनं संस्कृतसाहित्यं शनैः शनैः पर्याप्तं समृद्धितां समधिगच्छति। साम्प्रतं बहवो लेखकाः संस्कृतभाषायां साहित्यनिर्माणे बद्धपरिकराः प्रतीयन्ते। अन्यभारतीयभाषाणां साहित्यमिव संस्कृतभाषाऽपि नितरां नवनवोन्मेषसन्दर्भपरायणा अभिनवचिन्तनसन्दर्भसिञ्चितैकचित्ता सामयिकसमस्यासमुत्थानसम्पादितसमाधाना सती स्वकीयामुपस्थितिं स्वीकारयति सामान्यजनमध्ये। यद्यपि आधुनिकसंस्कृतसाहित्ये महाकाव्यलेखनस्य विषयभूमिरधुनाऽपि प्रायः प्राचीनपौराणिक-धार्मिककथासाहित्यमेव वर्त्तते। पुनरपि कैश्चित् लेखकैराधुनिकविषयानवलम्ब्यापि महाकाव्यानां लेखनं कृतम्। कथासाहित्यं तु निश्चितमेव महाकाव्यादिलेखनाऽपेक्षया अभिनवतरं विषयमेव वृणोति। अत्रेदं ध्यातव्यं यत् संस्कृतभाषायां ममाऽपि त्रयः कथासंग्रहाः प्रकाशिताः पाठकैर्विद्वद्भिश्च समादृताः।

आधुनिक-सामाजिक-राजनैतिक-पारिवारिक-वैयक्तिकसमस्याः अधिकृत्य स्फुटकाव्यनिर्माणे मम सर्वदैवाऽभिरुचिर्बभूव। तत्राऽपि च हास्य-व्यंग्यमाध्यमेन काव्यानां प्रस्तुतीकरणं मह्यम् अत्यन्तं रोचते स्म। साम्प्रतमपि सामयिकपत्रिकासु सामयिकसमस्याः अधिकृत्य नवसमाचारान् विषयवस्तूनि च विचार्य नवराजनैतिकसामाजिकवैयक्तिकपृष्ठभूमिं चाश्रित्य व्यंग्यात्मकं पद्यमयं मम सामयिकलेखनं निरन्तरमेव प्रकाश्यते यत्र तत्र चायोजितेषु कविसम्मेलनेषु निरन्तरं प्रस्तुतीक्रियते। यदि साहित्यं वर्त्तमानसमाजस्य दर्पणं वर्त्तते तदा दर्पणेऽस्मिन् एतत्कालिकसमाजस्य प्रतिबिम्बेन भाव्यमेव। तच्च यथावसरं मया यथाशक्ति सम्पाद्यत एव।

नवीनेऽस्मिन् मम “व्यंग्यार्थकौमुदी” नामके काव्यसंग्रहे तथाविधाः शतादप्यधिकाः कविताः हिन्दीपद्यानुवादसहिताः प्रस्तुता वर्त्तन्ते। तत्र प्रथमा दीप्तिः “प्रसाद-दीप्ति” रूपेणाऽभिहिता वर्त्तते यस्मिन् पर्यावरणसुरक्षा-वैयक्तिक मूल्यचर्चाविभिन्ननैतिकमानदण्डप्रतिपादनपुरःसरं तथाविधानां जीवनोपयोगिविषयाणां समावेशः कृतो विद्यते ये जीवने प्रसादसोपानम् आरोहयन्ति।

व्यंग्यार्थकौमुद्याः द्वितीयो विभागः “व्यंग्यदीप्ति” रूपेण वर्तते यस्मिन् लम्बायमानाः व्यंग्यकविताः सामयिकसमस्याः समधिकृत्य समाजस्य साम्प्रतिकं स्वरूपं व्यंग्यात्मकरूपेण सबलं प्रस्तुवन्ति। इमाः कविता अपि विभिन्नकाव्यमञ्चेषु यथावसरं पठिताःसन्ति। एतासु कवितासु मन्ये पाठकाः साम्प्रतिकभारतीयसामाजिकजीवनस्य साक्षाद् दर्शनं प्राप्स्यन्ति।

पुस्तकस्य तृतीयो विभागः “हास्य-दीप्ति” रूपेण प्रस्तुतः। तत्राऽपि विषयमधिकृत्य नवधा तस्य उपविभाजनं सम्पादितं वर्त्तते। प्रायशः अनुष्टुप् छन्दःसूपनिबद्धासु एतासु

कवितासु न केवलं साधारणं मनोरञ्जनमेव वर्त्तते प्रत्युत इमाः कविताः अपि बहुत्र अस्मदीयसामाजिक–पारिवारिक–वैयक्तिकचिन्तनस्य सहजां स्थितिमपि सहासं प्रकटयन्ति।

अस्माकं घनिष्ठमित्रेण कविवर्येण डॉ० रमापतिमिश्रेण परिश्रमपूर्वकमेतस्य काव्यसंकलनस्य स्तरीयः पद्यानुवादः हिन्दीभाषायां प्रकृत इति समालोचकैरपि प्रशंसितः। अनेकसंस्कृतछन्दसां हिन्दीपद्यानुवादस्तु तेषु तेषु छन्दःस्वेव वर्त्तते। अत एवाऽहम् एतस्मै कविसुहृदे सबलं साधुवादं प्रस्तौमि। एतेन महोदयेनैव कृतः “कोमलकण्टकावलिः” इति नामधेयस्य मम काव्यसंकलनस्य हिन्दीपद्यानुवादोऽपि पाठकैः बहुशः समादृतोऽभवत्। तस्य प्रमाणं चेदं यत् तस्य द्वितीयं संस्करणमपि विगते वर्षे एव प्रकाशितमभवत्। मन्ये व्यंग्यार्थकौमुद्याः पद्यानुवादस्याऽपि पाठकाः प्रशंसकाश्च तथाविधमेव समादरं विधास्यन्ति।

‘अक्षयवट’ प्रकाशनसंस्थायाः प्रबन्धकेन श्रीसत्यव्रतमिश्रेण अल्पसमयेनैव पुस्तकस्य प्रकाशने यःसुप्रबन्धः सम्पादितस्तदर्थमहं तस्मै भूरिशः साधुवादं कृतज्ञताज्ञापनं च निवेदयामि।

मन्ये संस्कृतपाठकाः भविष्यत्कालीनेषु मम प्रकाशनेष्वपि तथैव पूर्ववत् अभिरुचिं प्रदर्श्य संस्कृतभाषायाः प्रचारे प्रसारे च स्वकीयं सहयोगं सम्पादयन्तः संस्कृतलेखकान् प्रोत्साहयिष्यन्तीति सादरं निवेदयति।

दीपावली **डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री**
२८ अक्टूबर, २००८ **बी-२९, आनन्दनगर, रायबरेली-(उ०प्र०)**

●

अनुवादक की भूमिका

अग्नि पुराण के अनुसार मनुष्य होना दुर्लभ है। मनुष्य होकर विद्या प्राप्त करना और भी दुर्लभ है, विद्या प्राप्त हो भी गयी तो कवि होना कठिन है, कवि होने के बाद काव्यशक्ति तो नितान्त दुर्लभ होती है। यही शक्ति ही रचना की लोकप्रियता को निर्धारित करती है, किस कवि को ख्याति मिल जाये इसकी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। कहते हैं तुलसी को जीवन में बहुत अपमानित होना पड़ा। और की बात क्या उनकी धर्मपत्नी का सम्मान भी उन्हें नहीं मिल सका। किन्तु आज उनकी रचना कालजयी होकर पूरे विश्व को प्रभावित कर रही है। मेरे विचार से विद्वान् से लेकर जन सामान्य को प्रभावित करने वाली कविता का कवि काफी समय बाद कोई विरला ही होता है।

संस्कृत साहित्य में हास्य व्यंग्य दुर्लभ ही हैं। प्राचीन संस्कृत नाटकों, भाणों या सट्टकों में तो हास्य यत्र-तत्र परिलक्षित होता है परन्तु आजकल भारतीय भाषाओं में जिस प्रकार हास्य व्यंग्य की रचनाएँ एक पूर्ण स्वतन्त्र विधा के रूप में स्थापित होकर लिखी जा रही है वैसा संस्कृत साहित्य में अत्यल्प ही है। वर्तमान में आधुनिक समाज-व्यवस्था एवं लोक-व्यवहार पर आधृत काव्य में हास्य या व्यंग्य को संस्कृत भाषा में उपस्थापित करना सहज नहीं है। इसमें दैवी शक्ति का होना वरदान ही है। कविता तो बहुत लोग जोड़-तोड़ करके लिख लेते हैं, परन्तु काव्यशक्ति को प्राप्त करना अलग बात है। डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री की संस्कृत रचनाओं में इस शक्ति का अनायास ही दर्शन हो जाता है।

संस्कृत की इसी नई हास्यविधा एवं चिन्तन धारा को हिन्दीभाषा में अनुवाद रूप में प्रस्तुत करने का लक्ष्य रखकर ही हमने यह काव्य-रचना प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। हिन्दी के पाठकों को भी यह जानना चाहिए कि संस्कृत मृतभाषा न होकर आज भी एक जीवन्त भाषा है तथा इसमें भी उतना ही विविधतापूर्ण सामयिक एवं रोचक साहित्य लिखा जा रहा है जितना कि अन्य भारतीय भाषाओं में। इस सन्दर्भ में एक बात और कहना चाहूँगा कि डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री की मौलिक संस्कृत काव्य रचना "कोमलकण्टकावलिः" का जब हिन्दी काव्यानुवाद मैंने प्रस्तुत किया था तो यह आशा नहीं थी कि वह पद्यानुवाद इतना अधिक लोकप्रिय होगा कि उसका द्वितीय संस्करण भी निकालना पड़ेगा। आजकल हिन्दी या संस्कृत किसी भी भाषा में यदि लेखक के जीवन काल में एक संस्करण छप जाता है तो दूसरे संस्करण का प्रकाशन प्रायः दुर्लभ ही देखा जाता है। क्योंकि ये पुस्तकें कहीं किसी पाठ्यक्रम में तो निर्धारित होती नहीं। यह सब तो स्वतन्त्र लेखन ही होता है। अतएव ऐसी पुस्तकों का द्वितीय संस्करण का निकलना मेरे विचार से हर्षप्रद ही होना चाहिए।

डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री भारतवर्ष के प्राय: समस्त संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में अनवरत रूप में हास्य व्यंग्य एवं कथाएँ लिखते रहते हैं। इनकी संस्कृत व्यंग्य रचनाएँ तो अनूठी होती हैं। मेरे विचार से ये एकमात्र ऐसे कवि हैं जो संस्कृत काव्यमञ्चों पर व्यंग्य की सशक्त उपस्थिति को रेखाङ्कित करते हैं। अत: मैं इनकी अनेक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हास्य एवं व्यंग्य प्रधान पद्यों का यथावसर हिन्दी पद्यानुवाद लिखने लगा। साथ ही इनकी पुस्तक 'नर्मदा' के अनेक छन्दों का भी हिन्दी रूपान्तर करने में संलग्न हो गया। ये सभी पद्य न केवल संस्कृत साहित्य के लिए हास्य व्यंग्यविधा के उत्कृष्ट उदाहरण हैं अपितु हिन्दी पद्यानुवाद के साथ प्रकाशित होने पर ये निश्चित ही सामान्य या अल्प संस्कृतज्ञ पाठकों के लिए भी अत्यन्त उपयोगी होने के साथ ही हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि में भी योगदान करेगें-यह सोचकर इसे "व्यंग्यार्थकौमुदी" (हिन्दी पद्यानुवाद सहिता) इस नाम से प्रकाशित किया जा रहा है।

यह पुस्तक मुख्यत: तीन भागों में विभक्त है। इसकी प्रथम दीप्ति जो "प्रसाद-दीप्ति" नाम से है, उसमें संस्कृत के स्रग्विणी, वंशस्थ, मालिनी आदि शास्त्रीय छन्दों का हिन्दी पद्यानुवाद भी, उन-उन छन्दों में ही करने का प्रयास किया गया है।

द्वितीय दीप्ति में व्यंग्यात्मक कविताएँ हैं जो संस्कृत छन्दों की दृष्टि से शास्त्रीय तो नहीं हैं परन्तु इन पद्यों में भी एक विशिष्ट प्रयोग है तथा विचारों की अत्यन्त नवीनता है। इनमें प्रबल व्यंग्य का बोध होता है तथा इसके हिन्दी पद्यानुवाद में भी इसका विशेष ध्यान रखा गया है।

पुस्तक के तृतीय अंश को "हास्य-दीप्ति" के नाम से अभिहित किया गया है जिसमें प्राय: अनुष्टुप् छन्दों में ही संस्कृत की मूल रचना है। इस अंश का पद्यानुवाद भी पूरी तत्परता के साथ मौलिक संस्कृत हास्य को सुरक्षित रखते हुए प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

अब यह तो पाठकों पर निर्भर है कि वे इस पद्यानुवाद को कितना अपनायेंगे। संस्कृत छन्दों का हिन्दी पद्यानुवाद अन्य भाषाओं के पद्यानुवाद से अपेक्षाकृत निश्चय ही कठिन होता है। परन्तु डॉ० प्रशस्यमित्र शास्त्री की मौलिक संस्कृत रचना आधुनिक सन्दर्भों से युक्त है या विषय की दृष्टि से अत्यन्त नवीन है अत: हिन्दी अनुवाद में मुझे इन भावों को प्रस्तुत करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई। यदि पाठकों को यह अनुवाद कुछ भी रुचिकर लगेगा तो मैं अपना प्रयास सार्थक समझूँगा।

विजयादशमी **डॉ० रमापति मिश्र**
९ अक्टूबर, २००८ **गाँधीगंज, चित्रकूटधाम, कर्वी-(उ०प्र०)**

●

अनुक्रमणिका

अस्मदीयं किञ्चित्		**३-४**
अनुवादक की भूमिका		**५-६**
अथ प्रथमा दीप्तिः-प्रसाद-दीप्तयः		**९-३८**
सुस्थिरं स्यात् पदं नः	हो अडिग पग हमारा	१०
पर्यावरण-सुरक्षणम्	पर्यावरण-सुरक्षा	१४
एक्यबद्धं सदा भारतं भासताम्	देश में एकता हो	१८
धातुर्विचित्रा गतिः	जाने विधाता यहाँ	२२
जीवनस्य सार्थकता	सफल जीवन	२४
साम्प्रतिकः पुरुषः	आज का आदमी	२८
वसन्तः समायातः	वसन्त आ गया	३०
किं कथं विद्यते?	क्या कैसा होता है?	३२
अस्मदीया मातृभूमिः	हमारी मातृभूमि	३४
सुभाषः सुभाषः	वह 'सुभाष' है	३८
अथ द्वितीया दीप्तिः-व्यंग्य-दीप्तयः		**३९-९२**
सत्यमेव जयते	सत्यमेव जयते	४०
नवाः प्रवहन्ति वायवः	देखो बहती नई हवाएँ	४२
जनवर्याः षड्विंशदिनांकः	फिर आई छब्बीस जनवरी	५०
जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः	विजयी हो पन्द्रह अगस्त	५८
एकविंशी शताब्दी समागता	आई इक्कीसवीं शताब्दी	६२
स्वागतं कुरु होलिकायाः	प्रेम से होली मनाएँ	६८
पूर्णताम् अगमन्न यात्रा	रह गई यात्रा अधूरी	७२
नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय	नहीं दूसरा कोई चारा	७६
समागतो निर्वाचन-कालः	फिर चुनाव का समय सुहाना	८०
एकं परिदेवनम्	एक विलाप	८४
प्रत्याशी मतमेष याचते	प्रत्याशी यह वोट माँगता	८८
गान्धि-वानराणाम् उपदेशः	गाँधी के वानरों का उपदेश	९२
अथ तृतीया दीप्तिः-हास्य-दीप्तयः		**९३-२००**
दाम्पत्य-विषयः	दाम्पत्य-विषय	९४
प्रेमिका-विषयः	प्रेमिका-विषय	११४

राजनीति-विषयः	राजनीति-विषय	१२४
न्यायालय-विषयः	न्यायालय-विषय	१३४
शैक्षणिक-विषयः	शैक्षणिक-विषय	१४२
अपराध-विषयः	अपराध-विषय	१५२
पिता-पुत्रादि-विषयः	पिता-पुत्रादि-विषय	१५८
व्यापार-विषयः	व्यापार-विषय	१७०
यात्रादि-विषयः	यात्रादि-विषय	१९०
कविः काव्यं पठिष्यति	करें काव्य का पाठ यहीं	२००

●

अथ प्रथमा दीप्तिः

प्रसाद-दीप्तयः

सुस्थिरं स्यात् पदं नः

अभिनवमुखहास्यं सुन्दराणां शिशूनाम्,
जनयति हृदि शान्तिं प्रायशो मानवानाम् ।
उदरमिह परं तद् रिक्तमालोक्य तेषाम्
भवति बहुविषादो मानसे नैव केषाम्? ।।

प्रविशति पतिगेहे सुन्दरी कोमलाङ्गी,
यदि विभवविहीना सद्गुणा सद्वधूटी ।
परमिह धन-लुब्धैः पीड्यते यौतकार्थम्,
अहह! भवति पीडा मर्मसंघातिनी सा ।।

अयि! विटप! फलं ते प्रत्यहं भुञ्जते ये,
कुसुममपि सपत्रं गृहणते ये विलुञ्च्य ।
पुनरपि ददसे त्वं शङ्कुलाऽऽसञ्जनार्थम्,
समिधमिह सहर्षं तत्कृतघ्नेभ्य एव ।।

मिहिर! तव मयूखा भेदभावं विनाऽपि,
प्रतिगृहमिह भूमौ सर्वथा निष्पतन्ति ।
वयमपि तु समानाः स्याम नित्यं कथं न?
यदि मनुजसमाजे भेदभावः परास्तः ।।

मलयज! तव शैत्यं नैव किञ्चिन्मदीये,
शिरसि हरति पीडां दुःखदारिद्र्यजन्याम् ।
अनशनमिह कृत्वा निर्धना ये तु सुप्ताः,
दिवि दिवि तदु दृष्ट्वा मस्तकं पीडितं नः ।।

कमल! तव परागे षट्पदा गन्धलुब्धाः,
निशि निशि मदमत्ताः शेरते कोशबद्धाः ।
मम हृदि बहु कष्टं विद्यते यद् द्विरेफान्,
अवसि न हि शरण्यान् त्वं कथं वारणेभ्यः? ।।

शशधर! किरणास्ते नैव शान्तिं कथञ्चित्,
प्रददति भुवि दृष्ट्वा सञ्चये लोभमग्नान् ।
अहरहरतिमात्रं भोग्य-वस्तु-प्रसारे,
अभिनवधनिकांस्तान् दुर्मदान् सत्त्वहीनान् ।।

हो अडिग पग हमारा

प्रतिदिन खिलती हो बालकों की मुख-श्री
परम सुखद होती देखने में निराली ।
अधिक दु:खद होता देखने से दृगों को
जब हम उनका ही देखते पेट खाली ।।

पति घर जब जाती व्याहता हो नवेली
सब गुण परिपूर्णा हो भले ही परी सी ।
तदपि न धन लोभी स्वल्प सन्तुष्ट होता
मनुज हृदय कैसा? वेदना सो गयी सी ।।

प्रतिदिन फल खाते आज के ये अभागे
क्षणभर न विचारें तोड़ते हैं कली को ।
तरुवर! बतलाओ ईधनों की व्यवस्था
वितरित करते क्यों बेवफा आदमी को ।।

रविकिरण सदा निष्पक्षता से सभी के
घर पर पड़ती है भेद बातें मिटाये ।
हम सब मनु के ही पुत्र हैं तो बताओ
कब तक भटकेंगे एकता को भुलाये ।।

मलय पवन! मेरा शीश सन्तप्त सा है
कुछ कम न हुई है वेदना आज पूरी ।
अनशन कर सोए हैं यहाँ देशवासी
मनुज-मनुज में है देखिये आज दूरी ।।

कमल! सुन यहाँ जो आ गये पास तेरे
भ्रमर सुरस पीते कोश में बन्द होते ।
मम हिय यह पीडा क्यों नहीं हो बचाते,
यदि शरण तुम्हारे हा! उन्हें हाथियों से ।।

नहि शशि किरणों से शान्ति का भास होता
प्रतिपल धन लोभी रूपये ही बनाता ।
निश दिन करता है वासना पर्व पूजा
शशधर बतला क्यों रश्मियों को लुटाता ।।

गिरिवर! गरिमा ते साम्प्रतं नैव मन्ये,
भवतु जगति पूर्वं ते गुरुत्वं कदाचित् ।
जरसि तु पितरो ये पालनीया इदानीम्,
अहह! नवयुवभ्यस्ते महाभारभूताः ।।

अतुलितजलराशौ ये हठात् सम्प्रविष्टाः,
जननिधि-तलभूमिं मर्दयन्ते वगाह्य ।
परमिह भुवि कष्टं यत् खलानां त एव,
मनसि निहितभावं नाऽवगन्तुं समर्थाः ।।

पथि पथि यदि तीक्ष्णाः साम्प्रतं सन्ति शूलाः,
रहसि च रिपवस्त्वां सर्वदा भीषयन्ते ।
पुनरपि गमनं ते सत्यमार्गेषु बन्धो!
कथमपि च पदं स्यादस्थिरं नो जगत्याम् ।।

◆

गिरिवर! गरिमा से दूसरा कौन होगा
अतिशय गुरुता के भार को जो उठाये ।
अभिनव युवकों की बात भी है निराली
विगलित पितरों का भार भी ढो न पाये ।।

जलनिधि गहराई नापते जो मनस्वी
धन विभव लुटाते व्यर्थ में वक्त जाता ।
दु:खद बस यही है सोचता कौन होगा?
दलित हृदय कोई आज छू भी न पाता ।।

पग-पग पर फैले तेज कांटे धरा में
प्रबल रिपु डराये मौत का त्रास भारी ।
सुपथ गमन तेरा ध्येय हो पूर्ण साथी!
पद न लड़खड़ाये कामना है हमारी ।।

●

पर्यावरण-सुरक्षणम्

मानवाः साम्प्रतं स्वीयकृत्यैः कथम्
शोषणं प्रकृतेः प्रत्यहं कुर्वते? ।
शत्रुता या प्रकृत्या समं वर्धिता
तेन तस्याऽपि सत्ता बभूवाऽस्थिरा ।।

काननानां विनाशः समासादितः
पर्वता वृक्षहीनास्तथा निर्मिताः ।
प्रस्तराणां कृते पर्वता नाशिताः
प्राणिनो जंगलस्थाः समुन्मूलिताः ।।

सागरा दूषिता येन मत्स्या मृताः
निम्नगानां जलं केन वा दूषितम्? ।
साम्प्रतं पुण्यतोयं तथा सौख्यदम्
दुःखमेतद् हि गाङ्गं जलं दूषितम् ।।

कार्यशाला-समुत्सारिता या घना
धूमरेखा विषाक्ता नभो व्याप्नुते ।
तस्य यः कुप्रभावस्तु जीवेषु स्यात्
कस्य दोषो भवेदत्र कैश्चिन्त्यते? ।।

अद्य प्रौद्योगिकी संस्कृतिर्भीषणा
दूषितं वातवृत्तं विनिर्माति यत् ।
तेन स्वास्थ्यं सदा मानवानां हतम्
स्वास्थ्यदं वायुवृत्तं तथा दुर्लभम् ।।

मानवः स्वार्थसिद्धिं सदा चिन्तयन्
प्रकृतिं नाशयन् विकृतिं वर्धयन् ।
केवलं लाभमिच्छन् स तात्कालिकम्
भाविनीं सन्ततिं संशयेऽमज्जयत् ।।

हरीतिमा या विटपेषु राजिता
प्रदूषणैः साऽपि तु कालिमां गता ।
विलोक्य नग्नान् अथ पर्वतांस्तथा
प्रपीडितं स्याद् हृदयं मनीषिणाम् ।।

पर्यावरण-सुरक्षा

मानवों ने किया कार्य-कैसा यहाँ
जंगलों का सफाया हुआ देखिये ।
पेड़ पौधे धरा में न होंगे जहाँ
क्या बचेगा भला जिन्दगी के लिये ।।

आदमी पेड़ को काटता ही गया
नष्ट होती गयी पर्वतों की छटा ।
पत्थरों के लिये शैल खोदे गये
जंगली जन्तुओं का कहाँ है पता ।।

सागरों की दशा दोष से पूर्ण है
मौत से जन्तु सारे विदा हो रहे ।
है नदी भी यहाँ गन्दगी से भरी
पावनी आज गंगा कहाँ से बहे ।।

फैक्टरी बो रहा आज का आदमी
फैलता जा रहा है धुआँ ही धुआँ ।
जीव कैसे बचेंगे यहाँ सोचिये
मौत का दीखता है कुआँ ही कुआँ ।।

बाढ़ सी आ रही है मिलों की यहाँ
शुद्धता भी हवा की हवा हो गयी ।
रोगियों से भरे देश में आज तो
शुद्धता वायु की भी दवा हो गयी ।।

स्वार्थ ही आदमी सर्वदा सोचता
नाशता ही रहा प्राकृतिक सम्पदा ।
और तत्काल लाभार्थ सन्तान को
दुःखमें ही अजाने डुबाता रहा ।।

हरी भरी सी धरती कहाँ रही
प्रदूषणों से सुषमा न दीखती ।
पहाड़ नंगे सब हो रहे यहाँ
परन्तु क्यों आँख नहीं पसीजती ।।

बमादिशस्त्राऽस्त्रपरीक्षणैः स्वयम्
विषाक्तवातावरणं नरैः कृतम् ।
न चेह पर्यावरणे पवित्रता
न प्रकृतौ सन्तुलनं च दृश्यते ।।

क्वचित् समुद्रे खनिजाततैलकैः
समुद्रपानीयमपि प्रदूषितम् ।
तथैव नानानगरेषु दूषितं
जलं नदीनामपवित्रताकरम् ।।

क्व काननानामधुनाऽस्ति सान्द्रता?
क्व पर्वतानां वद साऽस्ति रम्यता? ।
क्व चाऽस्ति वातावरणे पवित्रता?
क्व चाऽस्ति पानीयकणेष्वरोगता? ।।

सदा सुरक्षा कुरुते हि प्राणिनाम्
सुपूजितेयं प्रकृतिः सुरक्षिता ।
परन्तु लोकैः प्रकृतिस्तिरस्कृता
निहन्ति लोकं बहुधा सुनिश्चितम्।।

सदैव पर्यावरणस्य रक्षणम्
समग्रलोकस्य हिताय वै वरम् ।
परस्परं भद्रमनन्तमिच्छता
जनेन रक्षा प्रकृतेः सदा कृता ।।

●

सदा बमों के बढ़ते प्रयोग से
हवा विषैली अब हो गयी यहाँ ।
नहीं रही वायु पवित्रता कहीं
वसुन्धरा की वह भव्यता कहाँ? ।।

जहाज का तेल मिला समुद्र में
विषाक्तता से परिपूर्ण जहो गया ।
नदी सभी दूषित हैं यहाँ-वहाँ
मिठास का स्वाद विधान खो गया ।।

घने वनों की सुषमा कहाँ रही?
कहाँ नगों का रमणीय रूप है ।
कहाँ हवा में मिलती पवित्रता?
कहाँ जलों का मधुर स्वरूप है? ।।

हरे भरे वृक्ष भरी निसर्ग ही
मनुष्य रक्षा करती प्रसाद से ।
परन्तु हो मानव से उपेक्षिता
मनुष्य का नाश करे विषाद से ।।

निसर्ग से जीवन है मनुष्य का
निसर्ग ही मानव की उपासना ।
किया यहाँ मानव ने विवेक से
निसर्ग रक्षा व्रतनिष्ठ साधना ।।

●

एक्यबद्धं सदा भारतं भासताम्

विलोक्य लोके बहुधा विभिन्नताम्,
दरिद्रतां हिस्रस्वभावतां पराम् ।
विचार्यते किं भुवि साम्प्रतं सखे!
पवित्रता मानवता दिवंगता? ।।

न चाऽस्त्रमेवान्तिममस्ति साधनम्,
न हिंसनं चान्तिममस्ति मार्गणम् ।
किमग्निरस्मिन् भुवि शम्यते क्वचित्,
घृतस्य धाराभिरहो समेधितः? ।।

प्रवाहयन्त्येव कथं जनाः पुनः,
नदीमिमे रक्तविनिर्मिताम्पराम् ।
कथं च ते भ्रातर एव साम्प्रतम्,
परस्परं शाश्वतशत्रुतां गताः? ।।

महर्षिभिर्यस्तु सदाऽभिनन्दितः,
महात्मबुद्धेन सदैव वन्दितः ।
गतः क्व पन्था गुरुनानकेन यः,
प्रदर्शितः स्नेहमयः शुभंकरः? ।।

विभिन्नधर्मेष्वपि निन्दितं सदा,
विभिन्नपान्थैरपि गर्हितं सदा ।
यदत्र हत्या क्रियते ह्यनागसाम्
यथा त्वनाथैः शिशुभिश्च रुद्यते ।।

न मानवास्ते हृदयं न चाऽगमत्,
दयार्द्रतां तद्विधवाऽश्रुजालकैः ।
न जीवितास्ते न हि दुःखितं मनः,
बहूनि श्रुत्वा शिशुरोदनानि च ।।

गृहाणि शून्यानि च रिक्तभाजनम्,
विदीर्णवासांसि विवर्णमाननम्।
क्षतानि गात्राण्यथ खिन्नमानसम्,
विलोक्य केषां हृदयं न दूयते? ।।

अहो! कथं जीवति रावणोऽधुना,
हतोऽपि रामेण पुरेति चाद्भुतम् ।

देश में एकता हो

सभी यहाँ मानव भेद भाव से
बँधे हुये हैं निज शत्रुता लिये ।
मनुष्यता आज कहाँ रही सखे!
कहाँ हुई भूल जरा विचारिये ।।

न शस्त्र से सम्भव विश्वबन्धुता
न मौत ही जीत सके मनुष्यता ।
न अग्नि घी से बुझती जली हुयी
सदा बढ़ेगी उसकी प्रचण्डता ।।

बहा रहे क्यों नदियाँ स्वरक्त की
न बन्धुता की पहचान जानते ।
सभी यहाँ एक मनुष्य पुत्र हैं
न शत्रुता क्यों मन से निकालते ।।

महर्षियों ने जिस मार्ग को रचा
वही रहा गौतम बुद्ध के लिये ।
जिसे रहे नानक भी सराहते
कहाँ गया मार्ग हमें बताइये ।।

स्वबन्धु हत्या अति निन्दनीय है
कहा जिसे मानव धर्म-शास्त्र ने ।
परन्तु निर्दोष मनुष्य बन्धु की
विनाश लीला किसके न सामने ।।

मनुष्य वे क्या सुनके न रो दिये
दयार्द्र हो जो विधवा-विलाप से ।
अरे! उन्हें जीवित भी न जानिए
दु:खी नहीं जो शिशु के प्रलाप से ।।

फटे पुराने कपड़े लपेटते
कभी न खाना भर पेट खा रहे ।
अपाहिजों के चेहरे बुझे-बुझे
मनुष्य है पत्थर का बता रहे ।।

अरे! कहाँ रावण का विनाश हो
सका अभी जीवित है दहाड़ता ।

कथं च गाण्डीवधनुर्धरोऽधुना,
विमूढतायां रमते मुहुर्मुहुः ।।

न जीवनं तस्य च जीवनं मतम्,
य एक एव श्वसिति स्वयं कृते ।
परोपकाराय न यः प्रयत्नवान्
अमुष्य श्वासोऽपि यथा हि भस्त्रिका ।।

अभूत् स्वदेशस्य सदा परम्परा,
दयालुता किं च परार्थवृत्तिता ।
परन्तु कैश्चिद् यदि तद्विरुध्यते
हृणीयते तेन तु भारतीयता ।।

कथं जनैस्त्याग-परार्थभावना,
न साम्प्रतं संस्म्रियते स्वजीवने?
दयामहिंसां त्वधिगम्य मानवाः
सदा समाजेऽधिगताः प्रशस्यताम् ।।

महर्षिभिश्चाऽथ वरेण्यमानवैः,
तपस्विभिः सज्जनसंचयैस्तथा ।
यशःपताका भुवि भारतस्य या,
न्यधायि सेयं गगने विधूयताम् ।।

सदैव सत्याचरणैः सुवृत्तिभिः,
परोपकारैः सदयानुभूतिभिः ।
सदुःखसौख्यानुभवैश्च मानवैः
द्विषां मनो जेतुमपीह शक्यते ।।

पवित्रमध्यात्मधराधिसंगतम्,
सदा नवोत्थानकरं शिवप्रदम् ।
प्रवर्त्तते दर्शनमत्र सर्वथा
हिताय लोकस्य च भारतस्य नः ।।

बहुजनहितकारी यो विधिर्जीवने नः,
भय-दुरित-विनाशी स्नेहसौहार्दधारी ।
प्रसरतु सततं स श्रेयसे लोकचित्ते
भवतु भवतु भूयो भारतं चैक्यबद्धम् ।।

●

कहाँ गया अर्जुन वीर बोलिये
विमूढ़ता में न यहाँ विचारता ।।

नहीं यही जीवन की विशेषता
स्वयं जिये जो निज पेट के लिये ।
परोपकारी गुण के अभाव में
मरा हुआ है वह मान लीजिये ।।

रही यही भारत की परम्परा
परोपकारी मन में दयालुता ।
परन्तु जो भी इनके विरुद्ध हों
नहीं करे लज्जित भारतीयता ।।

भुला दिया त्याग परोपकार को
मनुष्य ने सम्प्रति लोभवृत्ति से ।
दया अहिंसा व्रत से स्वदेश की
प्रशस्यता ज्ञात नहीं भला किसे? ।।

वसुन्धरा में निज देश की प्रभा
महर्षियों से नभ में प्रकाशिता ।
यशः पताका फहरे सुगन्ध हो
मनुष्य में सार्थक विश्वबन्धुता ।।

सदा-सदाचार पवित्र भाव से
परोपकारी अनुभूति वृत्तियाँ ।
समानता दुःख सुखानुभूति से
करें यहाँ दूर सभी विपत्तियाँ ।।

जहाँ सदाध्यात्मिक सद्विचार ही
सभी जनों के हित को सँवारता ।
विकास हो विश्व मनुष्यता बढ़े
बने यशस्वी निज भारतीयता ।।

बहुजन हितकारी जिन्दगी में हमारे
भय दुरित मिटाके स्नेह वर्षा बढ़ाके ।
निशिदिन शुभ भावों से भरा चित्त सारा
जगमग कर देवे देश की भारती को ।।

●

धातुर्विचित्रा गतिः

आकाशे क्वचिदुन्नताः प्रतिदिनं गर्जन्ति घोरा घनाः
नद्यः कूप-तडाग-गर्त्तनिवहा आप्लाविता वारिभिः ।
किन्त्वत्रैव जना न बिन्दुमपि ये पातुं लभन्ते जलम्
शुष्कां वीक्ष्य धरां भवन्ति विकला धातुर्विचित्रा गतिः ।।

सन्तप्तो रविदीप्तिभिः प्रतिहतो ग्रीष्मे पिपासाकुलः
पारावारमनन्तमच्छसलिलं दृष्ट्वा प्रमोदं ययौ ।
जिह्वाग्रेण परं तदैव सहसा स्पृष्ट्वा जलं दुःखितः
किंकर्त्तव्यविमूढधीः पिबतु किं धातुर्विचित्रा गतिः ।।

ये मूर्खा इह तत्त्वबोधरहिता विद्याविहीनास्तथा
ते लक्ष्मीपतयोऽभवन् बहुविधं सौख्यं समासाद्य वै ।
विद्वांसो बहवो महामतियुता दारिद्र्ययुक्ताः परम्
दुःखार्त्ता यदि ते भवन्ति भुवि सा धातुर्विचित्रा गतिः ।।

श्रीमन्तो बहवो धनं निजमहो संगोप्य रक्षन्ति ये
कार्पण्येन न ते व्ययं किमपि तत्कुर्वन्ति सत्कर्मणि।
किन्त्वस्मिन् भुवि निर्धनास्तु बहवः सम्प्रेरिताः श्रद्धया
धर्मार्थे व्ययमाचरन्ति बहुधा धातुर्विचित्रा गतिः ।।

शुद्धाचार-पराङ्मुखाः सुजनता-सत्त्वादिभिर्वञ्चिताः
नानागर्हितकर्मणि प्रणिहिताः सत्तां समापुर्जनाः ।
यै वै सात्त्विकवृत्तिभिः परिगताः शुद्धा वरेण्या जनाः
ते सत्ताभिरपाकृता अहह! सा धातुर्विचित्रा गतिः ।।

◆

जाने विधाता यहाँ

छाये बादल झूम-झूम बरसा पानी भरे खेत हैं
तालाबों नदियों समेत जल में डूबे नहीं भेद हैं।
है दुर्भाग्य न पी सकें तनिक भी पानी न कोई जहाँ
सूखा क्यों पड़ता कभी न समझा जाने विधाता यहाँ ।।

प्यासा होकर दौड़ता जब गया कोई बड़े हर्ष में
देखा सागर पूर्ण था उमड़ता पानी भरे दर्प में ।
थोड़ा सा जल पी गया तब लगा धोखा उसे हो गया
क्यों खारा जल है नहीं समझता जाने विधाता यहाँ ।।

जो हैं मूर्ख यहाँ विवेक जिनको होता नहीं ज्ञान का
वे होते धनवान भोग करते सर्वत्र सम्मान का ।
विद्या से परिपूर्ण किन्तु धन से जो हैं दरिद्री महा
क्यों पीड़ा सहते सदा विलखते जाने विधाता यहाँ ।।

पैसे से परिपूर्ण सेठ धन की रक्षा करे ध्यान से
कंजूसी करता नहीं व्यय कभी होता किसी दान से ।
श्रद्धा प्रेरित किन्तु निर्धन सदा देता सहारा वहाँ
क्यों धर्मार्थ पुनः करे व्यय भला जाने विधाता यहाँ ।।

शुद्धाचार बिना यहाँ सुजनता बन्दी हुई देश में
सत्ता का सुख भोगती कुटिलता आयी नये वेश में ।
विद्वत्ता अभिशप्त सी सिसकती पाती सहारा कहाँ ?
सत्ता से वह दूर है किस लिये जाने विधाता यहाँ ।।

●

जीवनस्य सार्थकता

तज्जीवनं न रुचिरं न तदर्थपूर्णं,
लोकोपकारचरिते न विभूषितं यत् ।
श्रद्धा दया सरलता ममता न यत्र,
तच्छुष्कपादप इवाऽस्त्यफलं जगत्याम् ।।

बाला रुदन्ति यदि भोज्यपदार्थहीनाः,
कष्टाायिताश्च विधवा विलपन्ति यद् वा ।
क्रन्दन्ति वा विगलिताङ्गनरा जगत्याम्,
पूजा तदा भगवतो विहिता कुतस्ते? ।।

सांहारिकैर्बहुविधैर्बहुधास्त्रजालैः,
विस्फोटयन्ति भवनानि विनाशयन्ति ।
सञ्चूर्णयन्ति सहसा क्वचिदप्यकस्मात्,
यानानि यात्रिभिरहो परिपूरितानि ।।

ते पामरा हि कथिताः कथमीशभक्ताः,
अज्ञाश्च ते वद कथं ननु देशभक्ताः? ।
व्यापादयन्ति यदि चेह निरीहलोकम्,
प्राप्स्यन्ति नैव नरकेऽपि गतिं ततस्ते ।।

विद्याविलासविभवाः पुरुषाः प्रशस्याः,
अज्ञानता-तिमिर-राशिमपाकिरन्तः ।
सज्ज्ञान-भास्कर-गभस्तिभिरत्र विश्वम्,
धन्याः सदैव बहुशः परिपूरयन्तः ।।

येषां हि वाचि मधुरत्वविशेषराशिः,
देदीप्यते च करुणा हृदये विशाले ।
नेत्रेषु तिष्ठति दयोदधि-वीचि-माला
धन्यं सदैव ननु जीवनमस्ति तेषाम् ।।

येषां हृदि व्यवसितं हितमेव कार्यम्,
ये शिक्षयन्ति धृति-सत्य-परोपकारम् ।
लोकाय ये ददति शास्त्रगतं च तत्त्वम्
धन्याः पवित्रहृदया विमला जनास्ते ।।

सफल जीवन

है व्यर्थ जीवन यहाँ उसका अधूरा
कल्याण भाव जिसके मन में नहीं है ।
श्रद्धा दया सरलता ममता न हो तो
सूखा हुआ विटप मानव जिन्दगी है ।।

खाना बिना विलखते असहाय बच्चे
सन्ताप से विलखती विधवा अभागी ।
लूले अपाहिज सदा रहते सताये
आराधना उचित है किस देवता की? ।।

विस्फोट से उजड़ती अब बस्तियाँ हैं
संहार की विविधता कितनी गिनायें ।
होते यहाँ जब कभी बम के धमाके
यात्री भरी परखचे बस के उड़ायें ।।

कैसे बने परमधूर्त यहाँ पुजारी
हिंसाव्रती मनुज तो सबको खलेगा ।
हत्या निरीह जन की करते यहाँ जो
निश्चित उन्हें नरक भी घुसने न देगा ।।

विद्या विभूषित मनुष्य यहाँ यशस्वी
अज्ञान के तिमिर को क्षण में मिटाये ।
विज्ञान की किरण से जग में सभी को
सन्मार्ग के सुनहरे पथ में चलाये ।।

वाणी सदा अमृत से जिसकी भरी है
कारुण्य से हृदय की परिपूर्णता है ।
आँखे सदा द्रवित हैं जिसकी दया से
विश्वास पूर्ण वह ही नर देवता है ।।

होती सदा हृदय में पर कार्य चिन्ता
छोड़ो न धैर्य सब को रहना सिखाते ।
संसार को समझते परिवार जैसा
कर्तव्य को सुजन ही जग में निभाते ।।

यैः सेवितास्तु पितरो भुवि शीर्णगात्राः,
तीर्थाटनं यदि कृतं नहि तैस्तदा किम्?
रागादिना न च मनांसि विदूषितानि,
गंगानिमज्जनमहो! यदि नो कृतं किम्? ।।

दृष्ट्वा बुभुक्षितजनं गृहवेदिकायां,
दत्त्वा त्वखिन्नमनसा निजभोजनांशम् ।
यैस्तर्पितो भुवि दरिद्रजनस्तदानीं
किं मन्दिरे भगवते वद भोगकार्यम्? ।।

सत्पूर्वजैर्निगदितं बहुधा श्रुतं यत्
लोके सदैव 'दशपुत्रसमो द्रुमः' स्यात् ।
किन्त्वद्य प्रकृतिविनाशपरा विमूढाः
आत्मानमेव हि मुधा किल नाशयन्ति ।।

आरोप-सेचन-क्रियाभिरनोकहानां
यैः प्रकृतं प्रकृतिचित्रमिदं समृद्धम् ।
तैर्मन्दिरे प्रतिनिविश्य यदा कदापि
अर्घ्यादिकं यदि कृतं यदि नो कृतं किम्? ।।

आनन्दयन्ति मदयन्ति विवर्धयन्ति ।
विस्तारयन्ति रचयन्ति सुखानुभूतिम् ।
सद्भद्रभावभरिता मनसो विचाराः
सन्तोषयन्ति गमयन्ति च सार्थकत्वम् ।।

सेवा किया जनक की जिसने धरा में
जाये न तीर्थ फिर भी यह पुण्य होगा ।
दुर्भावना हृदय में यदि हो भरी तो
गंगा नहा कर भला कब शुद्ध होगा ।।

भूखे दरिद्र जन को घर में बुलाके
अन्नादि से कर दिया यदि तृप्त काया ।
है क्या जरूरत उन्हें फिर मन्दिरों में
जाके लगाकर करें तब भोग माया? ।।

बातें सुनें हम सभी निज पूर्वजों की
पौधा लगाकर बनें दश पुत्र वाले ।
काटें परन्तु रस कोमल पादपों को
हत्या करें तनय की विपदा न टालें ।।

पौधे लगाकर सदा जलदान देते
निर्माण से प्रकृति की महिमा बढ़ायें ।
ऐसे मनुष्य सुर-मन्दिर में कभी भी
क्या हर्ज है न तन से यदि जा न पायें ।।

आनन्द से भर रहे मन को सभी के
कर्तव्य से मनुज में सुख को बढ़ाते ।
ऐसे विचार बनते जिन मानवों के
वे ही यहाँ सफल जीवन को बनाते ।।

●

साम्प्रतिकः पुरुषः

साम्प्रतं मानवः क्रूरकर्मा कथम्
मानवं हन्ति नित्यं वृथा निर्दयः ।
कष्टसन्तापमग्नः कथं सज्जनः
नैव गेहेऽपि सन्तिष्ठते निर्भयः ।।

बालकाः पितृहीना अनाथाः कथम्?
मातुरङ्के निलीना भयोद्वेजिताः ।
क्रीडने चाऽपि निःशङ्कभावेन ते,
तत्परा नैव त्रस्तास्तथा कुण्ठिताः ।।

मानवै र्रुद्यते दानवैर्हस्यते
भौतिकी मानलिप्सा वृथा वर्धते ।
दुःखदारिद्र्यपङ्के निमग्नं जनम्
वीक्ष्य चित्तं भवेत् कस्य नो पीडितम्? ।।

अत्र देशे सदा बुद्धगांधीनिभाः
लब्धवन्तो जनिं ये महामानवाः ।
ब्रूहि तेषां किमात्मा न कष्टं व्रजेत्
निर्दयं चित्तमालोक्य हिंसारतम्? ।।

क्वाधुना वेदवाणी गता पावनी?
क्वाधुना सत्यघोषो ह्यहिंसाध्वनिः?।
क्वास्ति बुद्धोपदेशो दयाप्लावितः?
गांधिनः क्वोपदेशस्त्वहिंसापरः? ।।

जीवितं सार्थकं तस्य सत्प्राणिनः
यः परेषां कृते मृत्युमाश्लिष्टवान् ।
यः समाजस्य राष्ट्रस्य वा सर्जने
आत्मसर्वस्वमेवाऽत्र विसृष्टवान् ।।

राष्ट्रमस्माकमेतत् सदा वर्धताम्,
भारतं भासतां भारतं राजताम् ।
अस्मदीयं प्रभो! जीवनं सर्वदा
राष्ट्ररक्षाकृते वर्त्ततां वर्धताम् ।।

●

आज का आदमी

आज का आदमी क्रूर कैसे हुआ
आदमी को स्वयं काटता जा रहा ।
सन्त के चित्त में क्षोभ सन्ताप है
चैन आवास में भी नहीं पा रहा ।।

बाल-बच्चे पिता को नहीं जानते
गोद में हैं छिपे देखते भीति से ।
खेलते भी नहीं है यहाँ वे कभी
साथियों में स्वयं आपसी प्रीति से ।।

रो रहा आदमी दानवों में हंसी
हो रही है यहाँ भोग की दासता ।
दुःख दारिद्र्य के पंक में डूबते
आदमी को नहीं आदमी जानता ।।

देश में थे कभी बुद्ध गान्धी हुये
और भी श्रेष्ठ पैदा हुये आदमी ।
क्यों न आत्मा सुखी पूर्वजों की हुई ?
हो रही है न हिंसा में कोई कमी ।।

पावनी वेद वाणी कहाँ खो गयी?
सत्य का घोष है क्या यहाँ देखिये? ।
है कहाँ बुद्ध सन्देश करुणा नदी?
सो गये आज गान्धी अहिंसा लिये ।।

है उसी व्यक्ति की अर्थ संपूर्णता
जो पराये जनों के लिये प्राण दे ।
देश की अस्मिता को बढ़ाये सदा
स्वार्थ को त्याग दे स्वच्छ मुस्कान दे ।।

राष्ट्र मेरा सदा वृद्धि को प्राप्त हो
क्रान्ति संयुक्त हो विश्व में स्थान हो ।
हे प्रभो ! जिन्दगी हो उसी के लिये
राष्ट्र रक्षा हमारा अनुष्ठान हो ।।

●

वसन्तः समायातः

शीतं विनाशितमतः शिशिरो व्यतीतः
कोष्णं दिनं सुखमपूर्वमहो ददाति ।
दीनास्तु वस्त्ररहिता मनुजा हसन्तः
सम्मानयन्ति यदिहाऽऽरभते वसन्तः ।।

कूहू-निनादमतिरम्यमनेकवारम्
शाखास्थिताः परभृताः परिपूरयन्तः ।
सानन्दमत्र विपिने विपिने भ्रमन्तः
उद्घोषयन्ति यदिहाऽऽक्रमते वसन्तः ।।

शीतं जलं बहुविधं बहुरागयुक्तम्
सोल्लासमेव वसनेषु परिक्षिपन्तः ।
अन्योन्यमेव वहसा बहु हासयन्तः
संद्योतयन्ति यदिहाऽऽक्रमते वसन्तः ।।

क्षेत्रेषु पक्वमतिनूतनमन्नवृन्दम्
हृष्टः प्रफुल्लितमनाः कृषकः प्रशस्तः ।
होलोत्सवेषु विदधन् बहुसस्ययागम्
हृष्टोऽनुपश्यति समर्धयते वसन्तः ।।

नव्यानि यत्तरुषु पत्रकदम्बकानि
दैनन्दिनं रुचिरतां परिवर्धयन्ति ।
क्षुद्रम्फलं मधुर-मञ्जुल-मञ्जरीषु
संयोज्य भाति तदिहाम्रतरौ वसन्तः ।।

अस्वस्थताम् अलसताम् अपकर्षतां च
स्वान्ते निवेशयति चाऽन्यमनस्कतां च ।
कन्दर्प-दर्प-दलिते मदिरेक्षणानाम्
देहे समाविशति पश्य युवा वसन्तः ।।

●

वसन्त आ गया

बीती छटा शिशिर की कटुशीत भागा
शीतोष्ण है दिवस का सुख ही सुहाना ।
नंगे शरीर मन में खुशियाँ समेटे
होता वसन्त पहले इनका निशाना ।।

मीठी धुनों सहित कोयल देखिये तो
बैठी हुई विटप में मृदुगीत गायें ।
आनन्द से विपिन में उड़ती हुई ये
आया वसन्त सब को पहले बतायें ।।

पानी उछाल करके कपड़े भिगोते
बच्चे प्रसन्न मन से खुशियाँ मनाते ।
आत्मीयता सहित ये हँसते-हँसाते
गाते वसन्त महिमा सबको लुभाते ।।

खेती पकी सफलता कृषि की यही है
हर्षातिरेक मन से सबको रिझाते ।
होली जली चल पड़े कृषि के तपस्वी
देखो वसन्त ऋतु की सुषमा बढ़ाते ।।

पत्ते नये विटप में निकले सुहाने
सौन्दर्य से नव वसन्त किसे न भाता? ।
छोटे लगाकर नये फल डालियों में
देखो रसाल वन की सुषमा बढ़ाता ।।

आलस्य दूर करता मन को लुभाता
उत्साह भाव भरता मन में सभी के ।
छाया वसन्त ललना मद को बढ़ाता
देखो प्रवेश करता तन कामिनी के ।।

●

किं कथं विद्यते ?

ब्रह्मचारिणां शृङ्गारः—विद्यावताम् अहङ्कारः।
वानप्रस्थिनां विकारः—उपदेशकानाम् असत्कारः।।
निन्दनीयो विद्यते ।

रागहीनानाम् आलापः—विधवानां विलापः।
रोगिणां सन्तापः—दुष्टानां प्रतापः।।
दुःखदायको विद्यते ।

शिशूनां हासः—चन्द्रमसो भासः।
भामिनीनां विलासः—वत्सरस्य मधुमासः।।
प्रीतिकारको विद्यते ।

दुर्जनानां प्रसन्नता—महात्मनां विपन्नता।
विरक्तानां सम्पन्नता—शिक्षकाणां खिन्नता।।
चिन्तनीया विद्यते ।

गुरुजनेषु भक्तिः—प्रबलेषु शक्तिः।
अधर्मेषु विरक्तिः—संस्कृतायाम् अनुरक्तिः।।
श्लाघनीया विद्यते ।

गवां संवर्धनं—मयूराणां नर्त्तनम्।
प्रणवस्य कीर्त्तनं—धर्मस्य प्रवर्त्तनम्।।
चित्ताह्लादकं विद्यते ।

वेदानां सन्देशः—आचार्याणाम् आदेशः।
सज्जनानां वेशः—मुनीनाम् उपदेशः।।
वरणीयो विद्यते ।

आर्यसमाजस्य प्रचारः—संन्यासिनां विचारः।
रोगिणाम् उपचारः—गृहस्थानां सदाचारः।।
प्रशंसनीयो विद्यते ।

●

क्या कैसा होता है ?

निन्दनीय- ब्रह्मचारियों के लिये अनुचित है श्रृंगार ।
विद्वत्ता को काटती अहंकार तलवार ।।
निन्दनीय है सन्त में आये काम विकार ।
उपदेष्टा का यदि नहीं होता है सत्कार ।।

दुःखप्रद- दु:खदायी होता सदा राग विना आलाप ।
वैसे विधवा का यहाँ होता करुण विलाप ।।

प्रीतिकर- भर देता आनन्द से बच्चों का मृदु हास ।
वैसे ही मन को लगे प्यारा चन्द्रप्रकाश ।।
किसे सुखी करता नहीं गजगामिनी विलास ।
सभी खुशी से झूमते आता जब मधुमास ।।

चिन्तनीय- चिन्तनीय है सर्वदा दुर्जन रहे प्रसन्न ।
पर हितकारी गुण लिये सज्जन रहे विपन्न ।।
संन्यासी न सराहिये पैसे से सम्पन्न ।
शोचनीय होता यहाँ यदि शिक्षक है खिन्न ।।

श्लाघनीय-श्लाघनीय है शिष्य की गुरुजन में हो भक्ति ।
वैसे ही बलवान में आवश्यक है शक्ति ।।
जिसके मन में सर्वदा रहे अधर्म विरक्ति ।
वन्दनीय जिसमें सदा संस्कृत में अनुरक्ति ।।

प्रसादप्रद- गोपालन संसार में सर्वोत्तम है कृत्य ।
किसे मयूरों का नहीं अच्छा लगता नृत्य ।।
जन हितकारी सर्वदा ओंकार का नाम ।
मन को आनन्दित करे आर्य धर्म अभिराम ।।

वरणीय- सर्वदैव वरणीय हैं वेदों का सन्देश।
सदा ध्यान के योग्य हैं गुरुओं के आदेश।।
तन पर धारण कीजिये सज्जनता का वेश।
मन में रखना चाहिये मुनियों के उपदेश।।

प्रशंसनीय- जग में आर्य समाज का फैले सदा प्रचार।
संन्यासी का मानिये मन में शुद्ध विचार।।
सब कार्यों में श्रेष्ठ है रोगी का उपचार।
सद्गृहस्थ का धर्म है सदाचार परिवार।।

अस्मदीया मातृभूमिः

सदा सागरैः क्षालिताः पूतपादाः,
किरीटे हिमाच्छादिताः शैलमालाः ।
क्वचित् केरले नारिकेलस्य वृक्षाः,
तटे सागरस्यासते पंक्तिबद्धाः ।।

सुगन्धाभिभूतान्यहो! चन्दनानाम्,
लसन्तीह कर्नाटके काननानि ।
क्वचित् चित्रकूटं क्वचिद् विन्ध्यमाला,
सुरम्याऽस्ति कश्मीरभूमिर्विशाला ।।

इहाऽभूत्पुरा वेदशास्त्रप्रकाशः,
पुराणेतिहासैस्तदर्थोपबृंहः ।
इहाध्यात्मभावस्तथा यज्ञयोगौ,
उपक्रामितो दर्शनानां विचारः ।।

इहैवादिकाव्यं च वाल्मीकिनोक्तं,
महाभारतं दृश्यते व्यासकृत्यम् ।
इहैवास्ति भासस्तथा कालिदासः,
सुलालित्य-गन्धर्वविद्याविलासः ।।

इयं रामचन्द्रस्य भूमिः प्रशान्ता,
तथा कृष्णचन्द्रस्य पुण्या धरित्री ।
पवित्रास्ति काशी पवित्रा त्वयोध्या,
वहत्यत्र गंगानदी पुण्यतोया ।।

प्रयागे तथा संगमोऽयं नदीनाम्,
सदा मानसं नः पुनीते समेषाम् ।
इहैवाऽभवद् बुद्धदेवो महात्मा,
अहिंसा-दया-जीवकारुण्यधर्मा ।।

तितिक्षाप्रसारे रतस्तापसोऽत्र,
महावीरतीर्थङ्करो जन्म लेभे ।
सदा शात्रवेष्वप्यहो! वैरहीनः,
अहिंसा-प्रवीणो महात्माऽत्र गांधी ।।

हमारी मातृभूमि

सदा पैर धोती समुद्री तरंगे
गले में पड़ी बर्फ माला निराली।
जहाँ केरला-नारिकेली कतारें
समुद्री तटों ने छटा दिव्य पाली ।।

जहाँ चन्दनों की सुगन्धा धरित्री
वनों की छटा से सभी को लुभाये।
कहीं चित्रकूटी छटा देश में है
कहीं रम्य कश्मीर शोभा बढ़ाये ।।

यहाँ पूर्व में वेद विज्ञान गंगा
बही थी पुराणेतिहासादि गाथा।
यहीं शास्त्र चर्चा यहीं यज्ञ पूजा
जिसे देखते ही झुका विश्वमाथा ।।

लिखा काव्य वाल्मीकि ने जो यहीं थे
महाभारती सृष्टि की व्यास जी ने।
हुए भास थे कालिदासादि वेधा
सदा भारती गीत गाया सभी ने ।।

यहीं राम की जन्मदात्री अयोध्या
यहीं कृष्ण के द्वारिका की कला है।
यहीं दिव्य काशी धरा में विचित्रा
यहीं गंगधारा सदा निर्मला है ।।

त्रिधारा जहाँ एक होती वहाँ है
त्रिवेणी सदा सभ्यता राजधानी।
महात्मा हुए बुद्ध जैसे तपस्वी
अहिंसा दया की निराली कहानी ।।

तपस्वी महावीर तीर्थङ्करों ने
तितिक्षा-प्रसारार्थ था जन्म पाया।
यहीं शत्रु में भी सदा स्नेह देखा
अहिंसा पुजारी महात्मा बनाया ।।

सतामेष देशो मुनीनां धरित्री,
कवीन्द्रस्य चेयं रवीन्द्रस्य भूमिः ।
इयं ज्ञानभूमिः सुसाहित्यभूमिः,
जयेत् सर्वदा पुण्यदा कमभूमिः ।।

●

यही देश है सज्जनों साधुओं का
कवीन्द्रा रवीन्द्रा धरित्री यहीं है ।
यही ज्ञान साहित्य की जन्म भू है
नहीं दूसरा देश ऐसा कहीं है ।।

●

सुभाषः सुभाषः

परेषां प्रियः कोऽस्ति कः श्रेष्ठनेता?,
कथं संस्कृतज्ञोऽस्ति! का कण्ठभूषा? ।
चतुर्भिर्मुखैः प्राह पृष्टो विधाता,
सुभाषः सुभाषः सुभाषः सुभाषा ।।

सम्यक् सुसन्दिशति को? वद शिक्षितः कः?,
को दीप्यते च निशि? कः प्रथितोऽष्टसंख्यः? ।
किं विद्यते भगवतश्च विशिष्ट-भावः?,
नेता सुभाष-चन्द्रो वसु-रद्वितीयः ।।

वह 'सुभाष' है

कौन दूसरों को प्रिय होता? कौन श्रेष्ठ नेता है?,
संस्कृतज्ञ कैसा होता है? कण्ठ-विभूषण क्या है? ।।
इन चारों प्रश्नों का उत्तर पूछा जब ब्रह्मा से,
दिया विधाता ने चारों का उत्तर चारों मुख से।
एक ध्वनि ही चारों मुख से क्रमशः थी जो आई,
वह 'सुभाष' है वह 'सुभाष' है यही बात बतलाई ।।

सम्यक् दिशा देश को देता कौन? किसे माना शिक्षित? ।
कौन चमकता है रजनी में? अङ्क आठ में क्या सीमित? ।।
क्या विशिष्टता है ईश्वर की? इन सबका क्या उत्तर है? ।
नेता सुभाष-चन्द्र वसु है अद्वितीय-यह उत्तर है ।।

◆

अथ द्वितीया दीप्तिः

व्यंग्य-दीप्तयः

सत्यमेव जयते

निर्वाचने कोटिरूप्याणां सम्प्रति व्ययं सांसदः कुरुते ।
कतिचित् लक्षपरिमितं गणितं किन्तु स घोषयते ।।
सत्यमेव जयते ।।

साहसिकैः पुरुषैः संयुक्तो मतदाने केन्द्र प्रत्याशी ।
बलादधिकृते मृषा मतानां दानं कारयते ।।
सत्यमेव जयते ।।

अपराधिनो गृहीताः कथमपि यैः कृतमत्र गर्हितं देशे ।
किन्तु पुलिस-थानायां गत्वा नेता मोचयते ।।
सत्यमेव जयते ।।

सदाचार-सम्पन्नः पुरुषः सत्यधार्मिकः किन्तु निर्धनः ।
तिरस्कृतः स्याद् भ्रष्टो धनिकः सत्कारं लभते ।।
सत्यमेव जयते ।।

मन्त्रयन्ति ये समं तस्करैः स्थित्वा कार्यालये स्वकीये ।
जनकष्टानि श्रोतुमिह देशे समयं नो दधते ।।
सत्यमेव जयते ।।

'गांधी जी की जय' इत्युक्त्वा मद्यं पिबति नवीनो नेता ।
मद्य-निषेध-सभायां गत्वा भाषणानि कुरुते ।।
सत्यमेव जयते ।।

दिवसे सर्वसम्मुखे हत्वा कमपि नरं ह्यपराधी गुण्डा ।
न्यायालयात् सपदि मुक्तोऽसौ वक्षो दर्शयते ।।
सत्यमेव जयते ।।

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्के पञ्चदशे दिवसे चाऽगस्ते ।
देवो रोदिति किन्तु दानवो मुहुर्मुहुः स्मयते ।।
सत्यमेव जयते ।।

●

सत्यमेव जयते

सांसद कई करोड़ों का व्यय निर्वाचन में करते ।
पर चुनाव आयोग में विवरण कुछ लाखों में रखते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

प्रत्याशी मतदान केन्द्र में नामी गुण्डे रखते ।
बन्दूकों के बल पर वे फर्जी मतदान कराते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

अपराधी यदि किसी तरह से पुलिस पकड़ में आते ।
तभी पुलिस थाना में जाकर नेता उसे छुड़ाते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

सदाचार-सम्पन्न धर्मरत पुरुष तिरस्कृत होते ।
भ्रष्टाचारी धनी व्यक्ति ही सदा पुरस्कृत होते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

गान्धी की जय बोल-बोलकर नेता मदिरा पीते ।
मद्य निषेध सभा में जाकर मिथ्या भाषण देते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

दिन में गुण्डे सबके आगे मानव का वध करते ।
न्यायालय से शीघ्र छूटकर सीना ताने चलते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

कार्यालय में चोरों के संग गूढ़ मन्त्रणा करते ।
जनता का दु:ख सुनने का वे समय नहीं हैं रखते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

पन्द्रह अगस्त छब्बीस जनवरी के अवसर जब आते ।
रोते हैं देवता किन्तु दानव मुस्काते रहते ।।
बोलो सत्यमेव जयते ।।

●

नवाः प्रवहन्ति वायवः

नवो युगो वृत्तान्तोऽभिनवः ।
पश्य नवाः प्रवहन्ति वायवः ।।

अशिक्षितानां पूजा दृष्टा
उत्कोचैः कर्मिणः प्रहृष्टाः,
दुष्टा इह परमं सन्तुष्टाः
श्रेष्ठाः किन्तु सर्वथा रुष्टाः ।

बुद्धिजीविनो गृहे प्रविष्टाः
समाचारपत्रे संश्लिष्टाः,
चालयन्ति शासनं तस्कराः
उग्रवादिनो हृष्टाः पुष्टाः ।

श्रीभूपेन-दलाल-हिन्दुजा
बैङ्कस्वामिनो टाटा-बिरला,
नर्त्तयन्ति लक्ष्मीमङ्गुलिषु
किंकर्त्तव्य-विमूढ़ा जनता ।

दैनन्दिनं सदैव वर्धते
उत्कोचोदर-गर्त्त-पीनता,
पश्यतु नैव परन्तु वर्त्तन्ते
महार्घतायां सखे! न्यूनता ।

नेतारो मात्सर्य-पीड़िताः
सत्तासंघर्षेषु सज्जिताः,
देशस्याऽस्य प्रशासनासने
गर्जति भ्रष्टाचार-दानवः ।।

नवो युगो वृत्तान्तोऽभिनवः ।
पश्य नवाः प्रवहन्ति वायवः ।।

हत्या बलात्कारम् अपहरणम्
सज्जन-मान-मर्दनाचरणम्,
दिशि दिशि विलोकयन्नपि देशे
कथन्नाऽस्ति भगवतोऽवतरणम्? ।

देखो बहती नई हवाएँ

नया जमाना नई अदायें ।
देखो बहती नयी हवायें ।।

मूर्ख यहाँ पर होते पूजित,
घूसखोर हो रहे प्रहर्षित ।
दुष्ट सभी सन्तुष्ट हो गये,
श्रेष्ठ किन्तु हो रहे तिरस्कृत ।।

बुद्धिजीवियों को घर भाये,
समाचार पत्रों पर छाये ।
शासन चला रहे हैं तस्कर,
उग्रवाद है शीश उठाये ।।

श्री भूपेन, दलाल, हिन्दुजा,
बैंक सम्हालें टाटा बिरला ।
लक्ष्मी को अंगुली में नचाते,
किं-कर्तव्य-मूढ़ है जनता ।।

घूसखोर की यह मोटाई,
रातों दिन बढ़ती गहराई ।
फिर भी देखो आज कहीं भी,
मंहगाई में कमी न आई ।।

नेता ईर्ष्या द्वेष बढ़ायें,
सत्ता का संघर्ष रचायें ।
देश प्रशासन की कुर्सी पर,
भ्रष्टाचारी बिगुल बजायें ।।

नया ज़माना नई अदायें ।
देखो बहती नयी हवायें ।।

बलात्कार हत्या अपहरण,
सज्जन के प्रति दुराचरण ।
कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा,
क्यों ईश्वर का यहाँ अवतरण? ।।

राजनीतिरधुनाऽस्ति भारते
क्षुद्र-कुटुम्ब-स्वार्थ-पर्यायः,
बलिनो घ्नन्ति निर्बलान् नितराम्
नष्टो विधि-शासन-सङ्कायः ।

नार्याः शोषणम् इह कुर्वाणः
यौतकासुरः सदा जृम्भते,
पदे पदे नववधूदाहकः
वैश्वानरः सदैव वर्धते ।

डङ्कलनीतिरियं कलङ्किता
यदि विकासमिह प्राप्स्यत्यनिशम्,
स्वावलम्बिता स्यान्निराश्रिता
पराधीनता स्थास्यति सततम् ।

वैदेशिक-व्यापार-माध्यमैः
भारतीयजनताऽतिशोषणम्,
पाश्चात्त्य-संस्कृति-प्रचारकैः
भारतीय-चिन्तन-विनाशनम् ।।

नव-सञ्चार-माध्यमाऽनुभवः ।
पश्य नवाः प्रवहन्ति वायवः ।।

जनकं सुरापानविनिमग्नम्
दृष्ट्वा पृच्छति तनयो नग्नम्,
तात! कथं तव रक्त नयने?
कथं पतति देहात्ते वसनम्? ।

मुहुर्मुहुः किं पिबसि विशिष्टम् ?
मह्यं देहि पातुम् अवशिष्टम्,
श्रुत्वा वचनं निजतनयस्य
जनकस्तदा ब्रवीति विहस्य ।

मद्यं त्विदं पिबन्ति महान्तः
अभिनेतारः कवयः सन्तः,

राजनीति है आज समझिये,
क्षुद्र स्वार्थ परिवार के लिये ।
बलशाली निर्बल को मारे,
ऐसा नंगा नाच देखिये ।।

नारी का शोषण चलता है,
बस दहेज दानव पलता है ।
घर-घर में नव वधू के लिये,
अग्नि कुण्ड जलता रहता है ।।

डंकल नीति यहाँ आयेगी
रातों दिन विकास लायेगी ।
स्वावलम्बिता निराधार हो
पराधीनता छा जायेगी ।।

परदेशी व्यापार आक्रमण
भारतीय जनता का शोषण ।
पाप धुनों से धुंधला होगा
भारतीय संस्कृति का दर्पण ।।

नवसंचार दूरदर्शन से
आये अनुभव हमें सिखायें ।
नया जमाना नई अदायें
देखो बहती नयी हवायें ।।

सुरापान में नग्न पिता से
पुत्र पूछता जिज्ञासा से ।
क्यों आँखें हैं लाल तुम्हारी
कैसे कपड़े गिरे वदन से? ।।

क्या पीते हो मुझे बताओ
बचा हुआ जो मुझे पिलाओ ।
मन्द हास से कहते पापा
आओ बेटे आओ आओ ।।

इसको पीते लोग महान्
अभिनेता, कवि, सन्त, सुजान ।

शिष्या विद्यालये सगुरवः
नेतारश्च तथा भगवन्तः ।

एहि तिष्ठ पिब समं मया त्वम्
मिश्रय जलं ग्लासपात्रे त्वम्,
पश्य कीदृशी रुचिरा मधुरा
वैदेशिकी विशिष्टा मदिरा ।

श्रुत्वा पितुर्वचनमतिरुचिरम्
पीत्वा सुरां स तनयोऽप्यचिरम्,
विलुठति भुवि वमनं कुर्वाणः
जनको हृष्यति तम् ईक्षमाणः ।।

नव्ययुगस्य प्रसादोऽभिनवः ।
पश्य नवाः प्रवहन्ति वायवः ।।

विज्ञापनं 'निरोध'-वस्तुनः
दूरदर्शने निशि निशि नित्यम्,
दृष्ट्वा पृच्छति तनया जननीम्
मातः! किमिदम्? देहि मदर्थम् ।

श्रुत्वा लघुतनयाया वचनम्
माता वदति विहस्य सलज्जम्,
नेतं वस्तु विद्यते तुभ्यम्
ज्येष्ठीभूय प्राप्स्यसेऽनुदिनम् ।

तिरस्कृत्य मातुर्वचनं सा
रोदिति भृशं निरोधं नेतुम्,
किंकर्त्तव्यविमूढा जननी
सफला भवति न तां सान्त्वयितुम् ।

पातञ्जलदर्शने निगदितः
क्व गतश्चित्त-वृत्ति-निरोधः?
चारित्रिकपतनाद् उद्धर्त्तुम्
क्व गतः काम-क्रोध-विरोधः? ।

नेता, गुरू, शिष्य सब पीते
देव करें इसका सम्मान ।।
उल्टी कर लोटते पुत्र को
पिता खुशी से लगा देखने ।।

बैठो साथ हमारे आओ
थोड़ा पानी स्वयं मिलाओ ।
देखो कैसी अच्छी मदिरा
बेटे इसको अब पी जाओ ।।

बातें सुनकर तभी पुत्र ने
पीकर मदिरा लगा झूमने ।
नवयुग का अभिनव प्रसाद यह
कैसे इसको हम ठुकरायें? ।
नया जमाना नई अदाएं
देखो बहती नयी हवायें ।।

घर में होता टी०वी० दर्शन
देख निरोध वस्तु विज्ञापन ।
क्या है इसे दीजिये मुझको
बिटिया कहती है हे माँ सुन ! ।।

लघुतनया की बातें सुनकर
लज्जा से बोली माँ हंसकर ।
अभी तुम्हारे लिये नहीं यह
तुम पाओगी आगे चलक़र ।।

माँ की बातें नहीं मानती
रोती किन्तु निरोध्र माँगती ।
किंकर्तव्यविमूढ़ा जननी
क्या समझाये नहीं जानती ।।

पातंजल दर्शन में आया
चित्तवृत्ति के लिये बनाया ।
यह निरोध चारित्रिक बल में
कहाँ गया यह समझ न पाया ।।

गृहे गृहेऽस्ति निरोधपैकटम्
गृहे गृहे च सुरा-सङ्कर्षः,
प्रतिभवने ब्ल्यू-फिल्म-दर्शनम्
कोमल-बाल-चित्त-संघर्षः ।।

आर्यावर्त्त-विनाश-कारवः ।
पश्य नवाः प्रवहन्ति वायवः ।।

●

घर–घर में निरोध का पैकेट
प्रति घर मदिरा पान विकट ।
खूब चल रही हैं ब्लू फिल्में
बच्चों के भविष्य का संकट ।।

आर्यावर्त विनाश के लिये
भारत में आयी विपदायें ।
नया जामना नई अदाएँ
देखो बहती नयी हवायें ।।

◆

जनवर्याः षड्विंशदिनांकः

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्कः
पश्य सखे! पुनरेष चागतः ।।

नवा चक्रचिह्निता पताका
यत्र तत्र सर्वत्र दृश्यते,
नगरे नगरे ग्रामे ग्रामे
'जन-गण-मन' इति ध्वनिः श्रूयते ।

जय-घोषैराकाशो व्याप्तः
देश-भक्त-नाना-पुरुषाणाम्,
गान्धी-नेहरू-तिलक-गोखले-
लालबहादुर-प्रभृति-नराणाम् ।

विद्यालये सभा सञ्जाता
हृष्टा बालाः प्राप्य मोदकम्,
किन्तु वयस्कानां कर्त्तव्यम्
कः कथयिष्यति न मया ज्ञातम् ।

जाति-भ्रातृ-भ्रातृव्यवादिता
क्षुद्रा भाषा-प्रान्तवादिता,
कलहोऽवर्ण-सवर्ण-नराणाम्
मिथ्याऽऽडम्बर-भाव-भराणाम् ।

यदा समाप्तो भविता देशे
तदा प्रगतिरीप्सिता प्रदेशे,
पूर्व-पश्चिमोत्तरदिशि जनता
दक्षिणदिशि या चापि संस्थिता ।

केवलमेषा श्रितबहुवेशा
'भारतीय' संज्ञया प्रसिद्धा,
भारतमातुः शुभवदनेऽद्य
मन्दस्मयो विशेष आगतः ।।

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्कः
पश्य सखे! पुनरेष चागतः ।।

फिर आई छब्बीस जनवरी

देखो मेरे प्यारे साथी
फिर छब्बीस जनवरी आई ।।

यहाँ वहाँ सर्वत्र तिरंगा
मस्ती में लहराता ।
नगर गाँव में हर कोई अब
जन गण मन ही गाता ।।

गान्धी, नेहरू, तिलक, गोखले,
लाल बहादुर जैसे ।
गूँज रहा नभ आज देखिये
देश भक्त की जय से ।।

विद्यालय में छोटे बच्चे
लड्डू से खुश होते ।
किन्तु बड़ों की बात पता क्या
वे हँसते या रोते ।।

बड़े विवादों में उलझा है
यहाँ बड़ों का जीवन ।
सदा परस्पर भेदभाव ही
सब का जीवन-दर्शन ।।

दिशा-वाद का भेदभाव जब
मन से यहाँ मिटेगा ।
देश हमारा प्रगति मार्ग पर
निश्चय तभी बढ़ेगा ।।

भाषा वेश अनेक भले हों
हम हैं भाई-भाई ।
आज देखिये भारत माता
लगता है मुस्काई ।।

फिर छब्बीस जनवरी आई ।।

सागर-तट-सौन्दर्य-पेशलः
नारिकेलसंकुलः केरलः,
सत्यं नारिकेलफलतुल्यम्
भारतीयजनतानां चित्तम् ।

अन्तः कोमलरसभरितत्वम्
किं न प्रकटयति हृदि हरितत्वम् ?
कथं पुनः शुष्कता प्रभूता?
क्वचिद् रूक्षता कथमारूढ़ा? ।

देशे यत्र कुत्रचिद् दृष्टम्
नाना-सम्प्रदाय-गत-युद्धम्,
सत्यं ब्रूहि तदेतत् सर्वम्
किं न द्योतयति हृदयमशुद्धम्? ।

नृपतिरशोको हिंसाविरतः
बुद्धो यत्र महात्मा निरतः,
तद्बिहारभूमेः समुत्थितः
दया-शान्ति-सन्देश आगतः ।।

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्कः
पश्य सखे! पुनरेष चागतः ।।

पूर्व-समुद्र-तीर-परिनिष्ठम्
उत्कलीय-कोणार्क-मन्दिरम्,
कस्य न चित्ते जनयति भावम्
सहजं सत्यं शिवं सुन्दरम् ।

पश्चिमसागर-तीर-निषण्णः
प्रत्याघात-दिनेऽप्यविषण्णः,
गुर्जरदेशः पुण्याक्रान्तः
गांधी-दयानन्दयोः प्रान्तः ।

लौहपुरुष-पुरुषार्थमापकः
राजतन्त्र-सत्ता-समापकः,
भारत-राष्ट्रैकता-कारकः
लोकतन्त्र-महिमाऽवभासकः ।।

केरल के नारियल समुद्री
तट को रम्य बनायें।
भारतीय जनता का मन भी
उसी तरह हम पायें ।।

अन्तर्मन है सरल किन्तु क्यों
हृदय न शीतल करता।
फिर नीरस कठोरता कैसी?
मन संशय में रहता ।।

जहाँ कहीं भी आज देखिये
भेदभाव का युद्ध छिड़ा है।
ऐसा लगता है यह जैसे
हृदय हमारा पाप घड़ा है ।।

गौतम बुद्ध, अशोक सभी ने
जहाँ अहिंसा ज्योति जलाई
उस बिहार की हवा देखिये
कैसी शक्ति सन्देशा लाई ।।

फिर छब्बीस जनवरी आई ।।

पूर्व समुद्र किनारे शोभित
है कोणार्क अनोखा मन्दिर।
किसे प्रभावित नहीं करेगा
अद्वितीय जग में अति सुन्दर ।।

पश्चिम सागर तट पर जिसकी
रवि किरणों से छटा चमकती।
बन्धु! यही गुजरात प्रान्त है
गान्धी, दयानन्द की धरती ।।

लौह पुरुष ने राज तन्त्र की
यहीं किया था कभी विदायी।
लोक तन्त्र से भारतीयता
पहली बार यहीं मुस्काई ।।

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्कः ।
पश्य सखे! पुनरेष चागतः ।।

स्वतन्त्रताया महाघोषणाम्
अधिकुर्वतां महावीराणाम्,
वीरप्रसविनी बङ्गभूरियम्
बंकिम-विपिन-सुभाषवराणाम् ।

काव्यकला-साहित्य-साधना
यत्र रवीन्द्र-कवीन्द्र-कामना,
मानव-मानस-मङ्गलकामी
यत्र विवेकानन्दः स्वामी ।

तेषां कथं महापुरुषाणाम्
नानाऽऽध्यात्मिकभावभराणाम्,
निर्धन-जन-चिन्तनमपहाय
सन्ततयः स्वार्थेषु सज्जिताः? ।

क्षुद्र-राज्य-सत्ता-समागमे
कथं महापङ्केषु मज्जिताः,
संकीर्णता पृथक्तावादम्
ध्यायन्तोऽपि च नैव लज्जिताः? ।

'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म'
इति वचनं कथमेव विस्मृतम्?,
पारस्परिक-वृथा-कलहेषु
सौन्दर्यं हृदये तिरस्कृतम्? ।

राष्ट्रध्वजं त्रिरङ्गं दृष्ट्वा
शुभं पर्वमाहात्म्यं स्मृत्वा,
अद्य परन्तु जनानां चित्ते
शुभ-सौन्दर्य-विशेष आगतः ।।

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्कः ।
पश्य सखे! पुनरेष चागतः ।।

फिर छब्बीस जनवरी आई ।।

आजादी का बिगुल बजाया
प्रथम बंग की इस धरती ने ।
बंकिम, विपिन, सुभाष यशस्वी
दिया यहीं बलिदान सभी ने ।।

काव्य, कला, साहित्य के लिये
जहाँ रवीन्द्र कवीन्द्र हुये थे ।
हुये विवेकानन्द यशस्वी
जन हितकारी लक्ष्य समेटे ।।

उन्हीं महापुरुषों की धरती
जगवन्द्या अध्यात्म गुणों से ।
दबी हुयी जा रही रसातल
वहीं आज स्वार्थी तत्त्वों से ।।

सत्तालोभी मानव देखो
महापंक में फंसता जाता ।
निर्लज्जता स्वार्थ के मद में
भूल गया सब रिश्ता नाता ।।

सच्चा ज्ञान अनन्त ब्रह्म का
चिन्तन मन से दूर हो गया ।
जन-जन में संघर्ष भाव है
भारतीय सौन्दर्य खो गया ।।

आज देखकर राष्ट्रध्वज को
फिर से खुशी हृदय में छाई ।
सुनो हमारे मन में बजती
भारतीय संस्कृति शहनाई ।।

फिर छब्बीस जनवरी आई ।।

देशे श्यामलतां रचयन्ती
सम्पन्नतां सदा गमयन्ती,
पवित्रयन्ती नगर-ग्रामान्
रमयन्ती चाऽऽध्यात्मिकभावान् ।

प्रोञ्छन्ती चञ्चलकल्लोलैः
पाप-पङ्कम् अतिहीन-जनानाम्,
शमयन्ती सा शीतलोर्मिभिः
हिंसा-द्वेषाऽनलं नराणाम् ।

सुधामयी कल-कलध्वनि-षङ्गा
यत्र हिमवतः प्रभवति गङ्गा,
तस्मिन् देशे पतित-पावके
वेदशास्त्र-स्वाध्याय-धारके ।

सांख्य-योग-वेदान्त-वेदिते
गीता-पूत-पुराण-पोषिते,
दर्शनोपनिषदां प्रवर्त्तके
युक्ति-भुक्ति-मुक्ति-प्रदायके ।

आदिकाव्य-वैभव-विभूषिते
व्यास-भास-साहित्य-साधिते,
कालिदास-कविता-विलासिते
नृत्य-गीत-सङ्गीत-सेविते ।

विविधोद्योग-समृद्धि-वर्धिते
नव-निर्माण-कथा-प्रवर्तिते,
वैज्ञानिक-प्रतिभा-विकासिते
प्रत्यग्रोन्नति-पथि विराजिते ।

जनसत्ता-समता-समर्थकः
राष्ट्रभक्ति-कर्त्तव्य-बोधकः,
गणतन्त्रस्य दिशोऽनुदेशकः
स्वाभिमान-शुभ-भावपूरकः ।।

जनवर्याः षड्विंशदिनाङ्कः ।
पश्य सखे! पुनरेष चागतः ।।

◆

जो हरियाली से भारत की
धरती को सम्पन्न बनाये ।
नगर गाँव को पावन करके
मानव में अध्यात्म जगाये ।।

कल्लोलनी तरंगों से जो
पाप पंक प्रक्षालन करती ।
हिंसा द्वेष तप्त मानव की
शीतलता के लिये निकलती ।।

हिम पर्वत से कल-कल करती
निर्मल गंगा जहाँ निकलती ।
सत्य ज्ञान स्वाध्याय संग से
पाप शाप से मुक्ति होती ।।

वेद, पुराण, भागवत गीता,
सांख्य, योग, वेदान्त मनोहर ।
दर्शन है उपनिषद् देखिये
मानवता पुरुषार्थ धरोहर ।।

आदि काव्य वैभव से मंडित
व्यास, भास साहित्य भारती ।
कालिदास संगीत गीत से
विश्व बन्धुता को संवारती ।।

उद्योगों से देश हमारा
आज प्रगति पर बढ़ता जाये ।
ज्ञान और विज्ञान क्षेत्र में
देखो कैसी धूम मचाये ।।

लोकतन्त्र में सभी बराबर
सभी मनुज हैं भाई-भाई ।
संविधान गणतन्त्र के लिये
भारत ने ही ज्योति जलाई ।।

फिर छब्बीस जनवरी आई ।।

●

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः

महाहर्षविषयोऽयं जातः
स्वतन्त्रतादिवसः सम्प्राप्तः ।
करे चक्रचिह्निताम्पताकां
नीत्वा धावति जनः समस्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

मिथ्याश्वासन-वचन-भाषणे
नेतारः परमं स्वाधीनाः ।
निर्वाचने तु विजयं लब्ध्वा
को न भवति धनसञ्चयव्यस्तः? ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

व्यापारे ये भवन्ति निरताः
मूल्य-वर्धने सदा स्वतन्त्राः ।
जनतायाः कष्टं प्रवर्धतां
भवतु जनः सामान्यस्त्रस्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

स्वतन्त्रतामनुभवति स्वकार्ये
चौर-दस्यु-लुण्ठाकजनोऽयम् ।
दिवसोऽयं स्मारयति यदेष
पुलिस-जनैः कृत एवाऽऽश्वस्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

गुरवः पठनपाठनात् मुक्ताः
परम-स्वतन्त्रः छात्रसमूहः ।
कश्च बोधयति किं कर्तव्यम्?
आदर्शः सङ्गमः परास्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त

स्वतंत्रता का दिवस हमारा
आज लग रहा कितना प्यारा।
लिये तिरंगा घूम रहा है
देखो यह भारत समस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

भाषण में मिथ्या आश्वासन
नेताओं पर किसका शासन ।
कौन चुनाव जीतने वाला
धन बटोरने में न व्यस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

व्यापारी भी सधे हुये हैं
मूल्य वृद्धि में लगे हुये हैं ।
जनता का दु:ख दर्द बढ़ाते
जिससे हों सब लोग त्रस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

आजादी का अनुभव करते
चोर लुटेरे आगे बढ़ते ।
याद दिलाता हमें दिवस यह
पुलिस जनों से हैं आश्वस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

मुक्त गुरू जी अध्यापन से
छात्र मुक्त सारे बन्धन से ।
कौन यहाँ आदर्श सिखाये
हुये सभी आदर्श ध्वस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

यत्र तत्र देशेऽस्ति विप्लवः
उग्रवाद-प्रेरिताः शङ्कवः ।
तस्य कारणं किमिति पृष्टे
नेता वदति विदेशी हस्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

धनिका एव पूजिता देशे
उपेक्षितः सज्जनो निर्धनः ।
तस्माद् धनमधिगन्तुं नितरां
नैतिकताया विषयो ध्वस्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

कर्मचारिणः सुविधाशुल्कम्
आदातुं सर्वथा स्वतन्त्राः ।
शोषणे च सामान्यजनस्य
कार्यालयस्तु सकलोऽभ्यस्तः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

सदाचार इह बहुपरतन्त्रः
भ्रष्टाचारः सरति स्वतन्त्रः ।
किं न सूचयति तदिदं दृष्ट्वा
देशोऽयं विलपति चाऽस्वस्थः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

जातिवाद-प्रायोजितयुद्धं
सम्प्रदाय-सिञ्चित-सङ्घर्षम् ।
प्रतिप्रान्ते संलक्ष्य प्रत्यहं
चीत्करोति कथम् इन्द्रप्रस्थः ।।

जयतु सदा पञ्चदशोऽगस्तः ।।

●

यहाँ वहाँ हो रहा उपद्रव
उग्रवाद का नंगा तांडव ।
हेतु बताते हैं नेता जी
निश्चित यहाँ विदेशी हस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

सदा सेठ का है अभिनंदन
कौन देखता निर्धन सज्जन ।
अनुचित पैसा पाते नेता
नैतिकता हो रही ध्वस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

घूसखोर आफिस के बाबू
कोई नहीं कर सके काबू।
जनता के शोषण में भाई
अब तो आफिस है अभ्यस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

सदाचार की पराधीनता
भ्रष्टाचारी की स्वतंत्रता ।
ऐसा लगता जिसे देखकर
देश हमारा रोग-ग्रस्त ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

जातिवाद का युद्ध चल रहा
सम्प्रदाय संघर्ष पल रहा ।
सभी प्रान्त में यही देखकर
भय से चिल्लाता इन्द्रप्रस्थ ।।

विजयी हो पन्द्रह अगस्त ।।

●

एकविंशी शताब्दी समागता

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

श्वानो गच्छति कारयानके
मार्जारः पर्यङ्के शेते,
किन्तु निर्धनो मानवबालः
बुभुक्षितो रोदनं विधत्ते ।

अचेतनाः पाषाणमूर्तयः
वस्त्रसज्जिताः संराजन्ते,
किन्तु दरिद्रो वृद्धोऽशक्तः
शीते वस्त्रं विना कम्पते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

विद्यालयेषु भवनाऽभावात्
ग्रामे तरुच्छायासु बालकाः,
प्रकृतिनिर्मिते वातावरणे
किं पठन्ति जानन्तु भवन्तः ।

परस्परं ते कलहायन्ते
मुहुर्मुहुर् अपशब्दायन्ते,
किन्तु शिक्षकाश्चिन्तारहिताः
तरोरधस्तात् सुखं शेरते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

अतिवृष्टिभिः पीड़िता ग्रामाः
यदा जलौघे भृशं निमग्नाः,
जलप्रवाहे वहन्ति पशवः
अन्नाऽभावे रुदन्ति शिशवः ।

आई इक्कीसवीं शताब्दी

भारत में आ रही साथियों
देखो इक्कीसवीं शताब्दी ।।

कुत्ता चलता कार यान में
बिस्तर पर बिल्ली सोती है ।
बेचारे गरीब की सन्तति
किन्तु भूख सहती रोती है ।।

पत्थर की निर्जीव मूर्तियाँ
अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनतीं ।
किन्तु गरीबों की सन्ततियाँ
बिना वस्त्र के रहें काँपती ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

विद्यालय भी भवन-हीन हैं
चलते हैं वृक्षों के नीचे ।
सभी जानते खुली जगह में
क्या पढ़ रहे हमारे बच्चे ।।

बच्चों की टोलियाँ परस्पर
गाली देकर युद्ध ठानती ।
किन्तु शिक्षकों की यह पीढ़ी
सोती है कुछ नहीं जानती ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

कभी बाढ़ से गाँव हमारे
सहसा जल निमग्न हो जाते ।
बहते हैं पशु जल धारा में
बच्चे अन्न बिना चिल्लाते ।।

एतमेव जलप्रलयं द्रष्टुम्
दुर्लभमिदं दृश्यमवगन्तुम्,
वायुयानमारुह्य प्रहृष्टः
नेता सपरिवारम् उड्डयते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

क्वचिद् बाबरीमस्जिद्-काण्डम्
क्वचिद् अयोध्यामार्च-कीर्तनम्,
सतीप्रथामण्डने भाषणम्
अस्पृश्यता-समर्थन-वचनम् ।

समानताया अधिकारस्य
संविधान-भावना-नाशनम्,
मन्दिरेषु हरिजनव्यक्तीनाम्
नैवाऽद्यापि प्रवेशस्तनुते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

निर्वाचने न कोऽपि सज्जनः
प्रत्याशी भवितुमिह क्षमः,
चालयन्ति निर्वाचनकार्यम्
साहसिकास्तस्करा दस्यवः ।

मतदाने केन्द्रेऽधिकारिणः
चाटुकारितामेव कुर्वते ।
पराजितोऽपि येन प्रत्याशी
अन्तिमचरणे विजयं लभते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

मुख्यमन्त्रि-निर्वाचन-करणे
विधायकानां न त्वधिकारः,
दिल्लीतः प्रेक्षका निशायाम्
आगच्छन्ति राजधानीषु ।

यही बात तब किसी के लिये
सुन्दरता की छवि बन जाती ।
बैठे वायुयान में उड़ते
नेता जी की दृष्टि लुभाती ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

कहीं बाबरी मस्जिद टूटी
कहीं अयोध्या-मार्च कीर्तन ।
सती प्रथा मंडन में भाषण
छुआछूत का कहीं समर्थन ।।

समता का अधिकार कहाँ है
संविधान भावना मिटा दी ।
मन्दिर में हरिजन भक्तों पर
मनमानी से रोक लगा दी ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

निर्वाचन में कोई सज्जन
प्रत्याशी होता न यहाँ पर ।
निर्वाचन का कार्य चलाते
चोर, लुटेरे, डाकू, तस्कर ।।

चाटुकारिता अधिकारी को
किंकर्तव्यविमूढ़ बनाती ।
हुये पराजित प्रत्याशी को
अन्त समय में जीत दिलाती ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

मुख्य मंत्रियों के चुनाव भी
नहीं विधायक कर पाते हैं ।
दिल्ली से जाते हैं प्रेक्षक
रातों रात बना जाते हैं ।।

प्रातः कश्चित् काष्ठोलूकः
त्वरितमेव शपथं गृह्णीते,
लोकतन्त्रमेतत् सुनवीनम्
राजतन्त्रमुपहसति भारते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

क्वचित् समक्षे बैंक-लुण्ठनम्
क्वचित् बलात् बालिकाऽपहरणं,
क्वचिद् यौतकार्थं मध्याह्ने
गृहमध्ये नववधू-ज्वालनम् ।

इतोऽधिकं का भवेद् विवक्षा?
दिनेऽप्यत्र नैवास्ति सुरक्षा,
नगरे नगरे मानव-हत्या
मत्कुण-वध-सादृश्यं भजते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

क्व गन्तासि? कुत आयातः?
का ते जननी? कस्ते तातः?
सत्यं ब्रह्म जगन्मिथ्येति
वेदान्तम् अनुचिन्तय भ्रातः! ।

वृथा रति र्नश्वरे शरीरे
भज गोविन्दम् इत्युपदिश्य,
रेलविभागो यत्र सहर्षम्
नित्यं मुक्तिपथं दर्शयते ।।

इयम् एकविंशतिः शताब्दी
पश्य सखे! आगता भारते ।।

पता सबेरे चलता सबको
निर्वाचन की हुई मुनादी ।
हंसता राजतंत्र कहता है
देखो लोकतंत्र आजादी ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

कहीं बैंक लुट रहा सामने
कहीं बालिका गयी भगाई ।
कहीं दहेज नाम पर कोई
वधू नवेली गयी जलाई ।।

क्या कहना है इसके आगे
कहीं सुरक्षा नजर न आती ।
खटमल जैसी मानव हत्या
बुद्धि किसी की समझ न पाती ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

जाना कहाँ-कहाँ से आये?
माता कौन पिता है कैसा?
ब्रह्म सत्य जग मिथ्या का
वेदान्त यही है सोचो ऐसा ।।

वृथा प्रेम नश्वर शरीर से
भज गोविन्द कहो अब साथी ।
रेल व्यवस्था इसीलिये ही
रोज मुक्ति का मार्ग दिखाती ।।

आयी इक्कीसवीं शताब्दी ।।

●

स्वागतं कुरु होलिकायाः

घृतं शुद्धं दुर्लभं यदि
महार्घं तत्किं बुभुक्षसि? ।
दुग्धमपि नो प्राप्यते सत्
भुङ्क्ष्व पत्रं मूलिकायाः ।।
स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

महार्घा शर्करा जाता
इन्धनं नैवोपलब्धम् ।
निर्मिता गुझिया न जाता
रोदनं शृणु बालिकायाः ।।
स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

समायाति गृहे जलं नो
नैव विद्युत् वर्त्तते वा ।
वृथा क्षुभ्यसि, ब्रूहि दोषः
कथं नगरीपालिकायाः ।।
स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

सज्जनान् पीडयति नित्यं
दुर्जनैः सममस्ति सख्यम् ।
पश्य गच्छति पुलिस-थानाम्
एष भक्तः कालिकायाः ।।
स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

कलियुगीनं रामराज्यम्
दुष्टधूर्त्त-जनैरुपेतम् ।
कुरु सुरक्षार्थं प्रबन्धम्
यदि भुशुण्डीनालिकायाः ।।
स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

नैव चित्रं सुन्दरं यदि
निर्मितं तत्कथं क्षुभ्यसि?

प्रेम से होली मनाएँ

शुद्ध घी ढूँढे न पायें,
चाहते पकवान खायें ।
दूध भी अच्छा न मिलता,
मूली के पत्ते चबायें ।।

प्रेम से होली मनायें ।।

महँगी हुई चीनी यहाँ,
लकड़ी जलाऊ है कहाँ? ।
बनेगी गुझिया कहाँ से,
रोती बिटिया भूल जायें ।।

प्रेम से होली मनायें ।।

पानी नल में नहीं आया,
बिजली बिना अन्धेरा छाया ।
व्यर्थ में मत भूल करके,
दोष शासन को लगायें ।।

प्रेम से होली मनायें ।।

साधुजन को जो सताता,
दुष्टन जन के साथ नाता ।
जा रहा है पुलिस थाना,
भक्त काली का दिखायें ।।

प्रेम से होली मनायें ।।

राजनीति की कैसी माया,
कलियुगी साम्राज्य छाया ।
यदि सुरक्षा चाहिये तो,
आप भी बँदूक लायें ।।

प्रेम से होली मनायें ।।

यदि नहीं है चित्र सुन्दर,
क्यों दुःखी है आप प्रियवर?

नेह चित्रकरस्य दोषः
एष दोषस्तूलिकायाः ।।

स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

आततायिभिरनुदिनं सा
हन्यते जनता वराकी ।
यत्र देशे पापमाहुः
वधे क्षुद्रपिपीलिकायाः ।।

स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

उग्रवादिन इह धरित्र्याम्
जानते नो प्रेमवचनम् ।
एकमेव विदन्ति यत् ते
तत्तु वचनं गोलिकायाः ।।

स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

प्रत्यहं गच्छति विमाने
साम्प्रतं नेता नवीनः ।
मुहुः पश्यति साभिलाषम्
शाटिकां परिचारिकायाः ।।

स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

राष्ट्र-संसदि सांसदास्ते
नैव जनतां चिन्तयन्ते ।
को वदिष्यति समाधानम्?
अस्मदीय-प्रहेलिकायाः ।।

स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

किमश्लीलं किं च श्लीलम्?
वृथा चिन्तयसे वसन्ते ।
वीक्ष्य पीनं पुरः शिथिलय
बन्धनं दृढ़-चोलिकायाः ।।

स्वागतं कुरु होलिकायाः ।।

●

है नहीं दोषी चित्तेरा,
तूलिका दोषी बतायें ।।
प्रेम से होली मनायें ।।

आततायी दुष्ट जन से,
पिस रही जनता दमन से ।
पाप चींटी वध जहाँ उस,
देश को हम भूल जायें ।।
प्रेम से होली मनायें ।।

उग्रवादी इस धरा में,
प्रेम की बातें न जानें ।
जानते हैं एक भाषा,
बस यहाँ गोली चलायें ।।
प्रेम से होली मनायें ।।

आज का आधुनिक नेता,
वायुयान में आता जाता ।
देखता परिचारिका की
दिव्य साड़ी की छटायें ।।
प्रेम से होली मनायें ।।

राष्ट्र के संसद भवन में,
देश की चिन्ता न मन में ।
कैसे समाधान हो इसका?
इस पहेली को बतायें ।।
प्रेम से होली मनायें ।।

मत सोचो अच्छी बुरी बात,
वासन्ती मधुरस भरी रात ।
कसा जो चोलिका-बन्धन,
उसे कुछ ढीला बनाएँ ।।
प्रेम से होली मनायें ।।

●

पूर्णताम् अगमन्न यात्रा

जीवनं सकलं समाप्तम्,
पूर्णतामगमन्न यात्रा ।।

किं कुकृत्यं किं सुकृत्यम्,
को रिपुः कश्चाऽस्ति मित्रम्?
नैव ज्ञातमिहाऽद्य यावत्
जना भुवि नाना चरित्राः ।।

पूर्णताम् अगमन्न यात्रा ।।

सज्जनाः संक्षुभित-चित्ताः
दुर्जनाः सन्निहितवित्ताः,
को विधास्यति धर्मकार्यम्?
अहो! दैवगतिर्विचित्रा ।।

पूर्णताम् अगमन्न यात्रा ।।

नैव पितरस्तर्पितास्ते
नापि गुरवः सेवितास्ते,
निर्मितोऽहं यत्कृपाभिः
कियत् प्रत्युपकारमात्रा! ।।

पूर्णताम् अगमन्न यात्रा ।।

सर्वदा संसार-विपिने
मार्गयन्ते मां मृगयितुम्,
साम्प्रतं करवाणि किं यदि
रक्षितो बहुधा विधात्रा ।।

पूर्णताम् अगमन्न यात्रा ।।

तामसे विषमेऽपि काले
कलहकलिते कलियुगीने,
मानवास्ते दुरितरहिताः
दुर्लभा नितरां पवित्राः ।।

रह गई यात्रा अधूरी

कट गई जिन्दगी सारी,
रह गई यात्रा अधूरी ।।

सत्कर्म क्या दुष्कर्म क्या?
कौन मित्र है? कौन शत्रु? ।
ज्ञान करने में अभी तक
दिख रही है साफ दूरी ।।

रह गई यात्रा अधूरी ।।

क्षुब्ध मन है सज्जनों का
दुर्जनों के पास धन है ।
कौन धर्म करे यहाँ पर
भाग्य गति भी है जरूरी ।।

रह गई यात्रा अधूरी ।।

किया नहीं पितरों का तर्पण
नहीं समर्पण गुरु-सेवा में ।
हम बने जिसकी कृपा से
किया प्रत्युपकार कब? री! ।।

रह गई यात्रा अधूरी ।।

सर्वदा संसार वन में
खोजते मुझको शिकारी ।
क्या करूँ जब भाग्य ने ही
दी सुरक्षा हमें पूरी ।।

रह गई यात्रा अधूरी ।।

तामसावृत दुःसमय में
कलियुगी संघर्ष युग में ।
सर्वथा सज्जन मनुज की
प्राप्ति की आशा न पूरी ।।

पूर्णताम् अगमन्न यात्रा ।।

साम्प्रतं जननी नवीना
कष्टकारकमेव मनुते,
लक्ष्मणस्य वन-प्रयातं
वीक्ष्य हृष्यति यत्सुमित्रा ।।
पूर्णताम् अगमन्न यात्रा ।।

●

रह गई यात्रा अधूरी ।।

आज कल की नई माता
वन-गमन लक्ष्मण लला की
कष्टकारक मानती पर
सुमित्रा को खुशी पूरी ।।
रह गई यात्रा अधूरी ।।

●

नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय

सर्वे प्रत्याशिनस्तु भ्रष्टाः
कुत्र मार्गयसि स्वच्छं चरितम्?
मतदाने समये सम्प्राप्ते
मतपत्रं किं पश्यसि मित्र!
प्रयतस्वाऽत्र महाभ्रष्टानाम्
मध्ये कस्यचिदपि वरणाय ।
नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

जलं दूषितं स्थलं दूषितम्
वायुमण्डलं महादूषितम्,
पातव्यम् इदमेव हि सलिलम्
श्वसितव्यं चैवाऽस्मिन् पवने,
भोपालं नगरं चाऽऽह्वयते
शीघ्रं सज्जो भव मरणाय ।
नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

वस्तुनि वस्तुनि मिश्रण-कार्यम्
रोगवर्धनं देह-नाशनम्,
शुद्धं दुग्धम् अत्र दुर्लभम्
नाऽस्ति च शुद्धविषस्य प्रापणम्,
स्निग्धं वसामिश्रमपि बुद्ध्वा
भव तत्पर एनम् अशनाय ।
नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

बहुयोग्योऽपि भृतिं नो लभते
बहुविद्योऽपि न कार्यरतोऽस्ति,
आरक्षण-नियमेन निबद्धः
हीनजनोऽपि पदेषु रतोऽस्ति,
यदि चेच्छसि प्राप्तुं पदमत्र
प्रार्थय देवम् अधम-जननाय ।

नहीं दूसरा कोई चारा

प्रत्याशी तो सभी भ्रष्ट हैं
अच्छी छवि को कहाँ खोजते,
निर्वाचन मतदान वक्त में
साथी क्यों मतपत्र देखते ?
इन्हीं महाभ्रष्टों में कर लो
वरण यही कर्तव्य तुम्हारा ।
नहीं दूसरा कोई चारा ।।

जल दूषित मिट्टी भी दूषित
हवा विषैली हुई देखिये,
पीना हमको ऐसे जल को
यही हवा है सांस के लिये,
सुनों मृत्यु के लिये बुलाता
है तुमको भोपाल तुम्हारा ।
नहीं दूसरा कोई चारा ।।

हुयी मिलावट वस्तु-वस्तु में
रोग वृद्धि है देह नाश है,
शुद्ध दूध विष नहीं मिले फिर
जानें यह कैसा विकास है,
चर्बी मिला हुआ घी खाकर
भूलो जीवन का सुख सारा ।
नहीं दूसरा कोई चारा ।।

हो सुयोग्य नौकरी न पाता
पढ़ा लिखा बेकार घूमता,
आरक्षण का बोझ लादकर
देश हमारा चले झूमता,
पद चाहें तो जन्म लीजिये
निम्न जाति में फिर दोबारा ।

नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

सर्वेषां दानानां मध्ये
उत्कोचस्य तु दानं श्रेष्ठम्,
एतद्दानं प्राप्य कर्मिणः
समुद्यतास्तव कार्यं कर्त्तुम्,
यदि चेच्छसि साधयितुं कार्यम्
कुरु शीघ्रम् एतद्दानाय ।

नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

●

नहीं दूसरा कोई चारा ।।

सब प्रकार के दान कर्म में
घूस दान ही सर्वश्रेष्ठ है,
इसी दान से काम कराना
कर्मचारियों को अभीष्ट है,
काम बनाना यदि चाहें तो
करें प्रयास घूस के द्वारा ।

नहीं दूसरा कोई चारा ।।

●

समागतो निर्वाचन-कालः

भारतदेशे पुनरायातः,
धन्य एष निर्वाचन-कालः ।।

नगरे-नगरे ग्रामे-ग्रामे
सम्प्रदायवादस्य पूजनम्,
अशिक्षितानां मतमधिगन्तुम्
पदे-पदे मिथ्याऽभिभाषणम् ।

यदि द्रष्टुम् इच्छन्ति भवन्तः
दुष्ट-धूर्त्त-पुरुषाऽभिनन्दनम्,
जाति-भ्रातृ-भ्रातृव्य-वादयोः
चतुष्पथेषु नग्न-नर्त्तनम् ।

मिथ्याऽऽश्वासन-मिथ्यावचसोः
प्रत्याशिनाम् अतीव स्पर्धनम्,
निहत्य परस्परिकं स्नेहम्
घृणा-रोष-विद्वेष-वर्धनम् ।

पश्यत साधुजनानां वेशे
राजनीति-माध्यमेन देशे,
जनतां वञ्चयितुं समागतः,
वञ्चक-दस्यु-शठानां जालः ।
धन्य एष निर्वाचन-कालः ।।

मिथ्याप्रत्याशिनां समूहः
मत-विभाजनार्थ समुद्यतः,
धनलाभाय क्वचित् प्रत्याशी
निर्वाचन-समरे समुत्थितः ।

कश्चित् निर्वाचनं स्थगयितुम्
निर्बल-प्रत्याशिनं हिनस्ति,
कश्चिद् 'गुण्डा' दल-समन्वितः
प्रबलं प्रत्याशिनं पिनष्टि ।

फिर चुनाव का समय सुहाना

आया भारत में चुनाव का
फिर से समय सुहाना ।।

नगर गाँव सर्वत्र देखिये
सम्प्रदाय को लोग पूजते ।
अशिक्षितों के वोट के लिये
नेता कितना झूँठ बोलते ।।

आप देखना यदि चाहें तो
देखें धूर्तों का अभिनन्दन ।
भातृ भतीजा-वादी युग का
चौराहों पर नंगा नर्तन ।।

झूँठा आश्वासन देने में
अब प्रत्याशी शक्ति लगाते ।
त्याग आपसी भेद-भाव को
घृणा क्रोध विद्वेष बढ़ाते ।।

देखो अब तो साधु वेश में
राजनीति का लिये बहाना ।
जनता को लूटने-हेतु ये
चोर बुन रहे ताना-बाना ।।

आया भारत में चुनाव का
फिर से समय सुहाना ।।

मिथ्यावादी प्रत्याशी गण
वोट विभाजन करा रहा है ।
धन लोभी कोई प्रत्याशी
निर्वाचन में खड़ा हुआ है ।।

कोई चुनाव रोकने खातिर
निर्बल प्रत्याशी को मारे ।
कोई बलशाली प्रत्याशी
गुण्डों से परलोक सिधारे ।।

कश्चिद् आग्नेयास्त्र-संवृतः
मतदानस्य केन्द्रम् अधिकुरुते,
प्रत्याशिनश्चरित्रं हन्तुम्
मिथ्या-निम्न-प्रचारं तनुते ।

उत्कोच उत्फुल्लति सततम्
भ्रष्टाचारो विचरति निरतम्,
दृष्ट्वा सकलं छद्मपुराणम्
नीचैर्भवति सुधीनां भालः ।

धन्य एष निर्वाचन-कालः ।।

मूषक-मार्जारयोः साम्प्रतम्
मत-प्राप्त्यर्थं ग्रन्थि-बन्धनम्,
जनसेवा-ब्याजेन नायकाः
जनतायाः कुर्वन्ति शोषणम् ।

निशि पिबन्ति मद्यम् अथ दिवसे
मद्यनिषेध-सभासु भाषणम्,
यद्यपि तस्कर-वृत्ति-निन्दनम्
किन्तु तस्करैः समं भोजनम् ।

व्ययः कोटिरूप्याणां क्रियते
कृष्णधनं तत्कुत आयाति?
निर्वाचने निर्धनः सज्जनः
प्रत्याशी भवितुं न हि क्षमः ।

धनिकानाम् अत एव केवलम्
प्रवर्त्तते निर्वाचन-युद्धम्,
लोकतन्त्रमस्माकं दंष्टुम्
फूत्कुरुते भयङ्करो व्यालः ।

धन्य एष निर्वाचन-कालः ।।

◆

कोई बन्दूकों के बल पर
मत केन्द्रों पर कब्जा करता ।
कोई दुश्चरित्रता का
मिथ्या आरोप किसी पर मढ़ता ।।

घूसखोर का बढ़ा मोटापा
भ्रष्ट जनों का हुआ जमाना ।
छद्म पुराण देख सज्जन को
पड़ता है अब शीश झुकाना ।।

आया भारत में चुनाव का
फिर से समय सुहाना ।।

चूहे बिल्ली सदृश मित्रता
प्रत्याशी करते गठबन्धन ।
जन सेवा का किये बहाना
नेता करते रहते शोषण ।।

सभी रात भर मदिरा पीकर
दिन भर भाषण देते रहते ।
निन्दा करते हैं तस्कर की
किन्तु साथ में भोजन करते ।।

खर्च करोड़ों का जो करते
वह काला धन कहाँ से आता ।
इसीलिये अब निर्वाचन से
निर्धन सज्जन का क्या नाता? ।।

केवल धनियों में होता है
निर्वाचन का युद्ध ठिकाना ।
लोकतंत्र को डसने आया
यह नागों का नया जमाना ।।

आया भारत में चुनाव का
फिर से समय सुहाना ।।

●

एकं परिदेवनम्

येषां हस्तेषु दृष्टा मया पुरा कुसुमकलिकाः ।
तेषां हस्तेषु साम्प्रतं शोभन्ते भुशुण्डि-नलिकाः ।।

येषां मुखानि पुरा दृष्टानि मन्त्रोच्चारण-तत्पराणि ।
तेषामेव मुखानि साम्प्रतम् अश्लीलभाषण-पराणि ।।

येषाम् अधरेषु पुरा विराजते स्म दुग्धपात्रम् ।
तेषाम् अधरेषु सुशोभते साम्प्रतं सुरा-पात्रम् ।।

येषां हृदयेषु पुरा बभूव कदाचिदौदार्यम् ।
तेषामेव चित्तानि समाचरन्ति साम्प्रतं चौर्यम् ।।

येषां नेत्रेषु पुरा मया लक्षितो लज्जाभावः ।
तेषामेव नयनेषु विराजते साम्प्रतम् असज्जाभावः ।।

येषां चरणाः पुरा भ्रमन्ति स्म सद्गतिपराः ।
तेषामेव चरणाः साम्प्रतम् अधमगतिपराः ।।

येषां लेखन्यः पुरा लिखन्ति स्म वीरतागानम् ।
तेषामेव लेखन्यः साम्प्रतं गायन्ति हीनता-गानम् ।।

येषां वाद्येषु निःसरन्ति स्म पुरा लोकगीतानि ।
तेषामेव वाद्येषु साम्प्रतं वाद्यन्ते शोकगीतानि ।।

येषां गृहेषु पुरा कदाचित् पाल्यन्ते स्म धेनवः कीराः ।
तेषामेव गृहेषु पाल्यन्ते साम्प्रतं कुक्कुट्यः शूकराः ।।

अहो! क्व गच्छामो वयं किं शोचामो वयम्? ।
किं वयं त एव भवामो ये पुराऽभवाम? ।।

किमस्मदीयं तदेव हृदयं यत् पुरा बभूव? ।
किमेतत् तदेव नयनं यत् पुरा बभूव? ।।

कथमेतत् कुत एतत् इत्यादि-नानाप्रश्नानाम् ।
उत्तरं मार्गयामोऽधुना वयम् अतिविकटानाम् ।।

न चोत्तरं लभामहे बहुविधं चिन्तयन्तोऽपि ।
न समाधानमधिगच्छामः प्रत्यहम् आमनन्तोऽपि ।।

एक विलाप

हाथों में पहले फूलों की कलियाँ होती जिनके ।
आज उन्हीं के हाथें में शोभा पाती बन्दूकें ।।

जिनके मुख पहले करते थे मन्त्रों का उच्चारण ।
उनके मुख से आज सुनाई देता गाली भाषण? ।।

जिनके अधर कभी होते थे दुग्ध पान से शीतल ।
उनके अधरों पर रहती है अब शराब की बोतल ।।

पहले बहुत यहाँ जिनके मन में उदारता रहती ।
अब उनके मन में चोरी की बुद्धि दिखाई पड़ती ।।

जिनके आँखों में पहले था लज्जा का आभूषण ।
अब उनकी आंखों में रहता निर्लज्जा का दर्पण ।।

पहले जिनके चरण सर्वदा सदाचार पर चलते ।
आज उन्हीं के चरण किसलिये दुराचरण में बढ़ते? ।।

कभी वीरता के गीतों को सदा लेखनी लिखती ।
आज वासना में डूबी क्यों सस्ते दर पर बिकती ।।

जिन वाद्यों में लोक गीत की पहले बहती धारा ।
आज उन्हीं के शोक गीत में डूब रहा जग सारा ।।

गोपालन के साथ घरों में पहले पलते तोते ।
आज वही क्यों सुअर मुर्गियाँ खाते पीते सोते? ।।

अरे! कहाँ जा रहे हम सभी पता नहीं क्या सोच रहे हैं ।
क्या हम लोग वही मानव है जो सदियों के पूर्व रहे हैं ।।

क्या हम सबका वही हृदय है जो पहले था पास हमारे ।
क्या ये आँखें पहलें की हैं जिनमें हैं विश्वास हमारे? ।।

ये परिवर्तन हुये कहाँ से कौन इन्हें ले आया? ।
खोज रहा है मैं इन प्रश्नों का उत्तर समझ न पाया? ।।

बहुत समय हो गया सफल हो सका न मन का चिन्तन ।
बँधा हुआ है अभी पूर्ववत् समाधान का बन्धन ।।

मन्ये कदाचिदुत्तरम् अधिगमिष्यामो ध्रुवम् ।
तदा भवन्तमपि सोत्साहं कथयिष्यामो वयम् ।।

यदि भवन्तः पूर्वमेवोत्तरम् एतेषाम् अधिगच्छन्तु ।
तदा कृपया मामपि संसूच्य शीघ्रम् अनुगृह्णन्तु ।।

●

यथासमय मेरे प्रश्नों का समाधान जब होगा ।
आप सभी के सूचनार्थ मैं सूचित तभी करूँगा ।।

इससे पहले आप अगर उत्तर कोई पा जायें ।
बड़ी कृपा होगी मुझ पर यदि आप मुझे बतलायें ।।

●

प्रत्याशी मतमेष याचते

निर्वाचन-समयः प्रवर्त्तते ।
प्रत्याशी मतमेष याचते ।।

त्यक्त्वा नाना-वस्तु-भूषितम्
गृहं निजं वातानुकूलितम्,
महानिदाघे स्विन्न-शरीरः
समर्थकैः सह गच्छति वीरः ।

नैव जनपदे कदापि दृष्टः
पञ्च-वर्ष-पर्यन्तं गूढः,
निर्वाचन-समये सम्प्राप्ते
गृहद्वारि मे प्रकटीभूतः ।

अस्य करौ बद्धाञ्जलिरूपौ
नेत्रे कोमल-करुणा-कूपौ,
जनताया दृष्ट्वा दारिद्र्यम्
नक्र इवाऽश्रुमोचनं कुरुते ।।

प्रत्याशी मतमेष चायते ।।

विजयं प्राप्य सांसदो भूत्वा
एष भविष्यति पुनर्निगूढः,
स्वीयां निर्धनतामपनेतुम्
मनोयोगतो यत्नारूढः ।

आग्नेयाऽस्त्र-संयुतैः पुरुषैः
परिवृतोऽयं गेहे भविता,
सार्धं केनचिदपि संगन्तुम्
नैव राजधान्यां कामयिता ।

प्राप्य च लोकसभायां सत्ताम्
वर्धयते निज-वेतन-भत्ताम्,
पुरस्कृत्य जनता-कष्टानि
रेल-भाटकं विस्तारयते ।।

प्रत्याशी मतमेष याचते ।।

प्रत्याशी यह वोट माँगता

जब चुनाव का समय चमकता ।
प्रत्याशी यह वोट माँगता ।।

सुख सुविधा से तोड़ा नाता
निर्वाचन में ध्यान लगाता,
तेज धूप में बहा पसीना
लिये समर्थक घर-घर जाता ।

कभी न जो जनपद में आया
पाँच वर्ष तक छिपा छिपाया,
निर्वाचन मौसम आते ही
हमने दरवाजे पर पाया ।

दोनों हाथ जोड़ता जाता
सबको करुणा-भाव दिखाता,
जनता का दुःख दर्द देखकर
घड़ियाली आँसू टपकाता ।

यह प्रत्याशी वोट माँगता ।।

विजयी होकर सांसद होगा
पुनः कभी वह नहीं दिखेगा,
अपनी निर्धनता को सारी
शक्ति लगा कर दूर करेगा ।

शस्त्र-धारियों के रक्षण में
सदा रहेगा बड़े भवन में,
कभी किसी के साथ न चाहे
जाना वह दिल्ली संसद में ।

लोकसभा में पाकर सत्ता
बढ़वाता निज वेतन भत्ता,
जनता के दुर्बल कन्धों पर
मँहगाई का भार लादता ।

यह प्रत्याशी वोट मांगता ।।

स्वविशेषाऽधिकार-विषयेषु
भवत्येष ततं श्रद्धालुः,
सार्वजनिक-चर्चा-सन्दर्भे
संसदि भवति सदा तन्द्रालुः ।

धनिकेभ्यः सततं गृहणीते
काल-धनं निर्वाचन-काले,
तेषामेव हितं साधयते
समागते समये विकराले ।

जनतार्थं न हि भद्रभावना
केवलमात्म-हितैक-कामना,
मतमधिगन्तुं यस्य चाऽऽनने
छद्म-स्मितिः सदैव राजते ।।
प्रत्याशी मतमेष याचते ।।

●

अपना ही अधिकार चाहता
सपनों का संसार बाँधता,
चर्चा जब होती संसद में
सोता है कुछ नहीं जानता।

निर्वाचन के समय सदा यह
काले धन का चन्दा लेता,
बदले में वह बिना विचारे
जनता के हित की बलि देता।

जनता का कल्याण त्यागता
अपना हित सर्वत्र साधता
किन्तु वोट के लिये मोहनी
कपट-पूर्ण मुस्कान बाँधता।
यह प्रत्याशी वोट माँगता ।।

●

गान्धि-वानराणाम् उपदेशः

आश्वासनानि वितथानि तु राजनीत्याम्,
सत्यं वदेदिह कदापि न नेतृवर्गः ।
संकेतयन् कपिरयं प्रथमः पुरस्तात्,
हस्ताङ्गुलिं हि निदधाति मुखे स्वकीये ।।

निर्वाचनस्य विषमे समये समाप्ते,
कष्टानि नैव शृणुतां जनमानसानाम् ।
हस्ताङ्गुलिं श्रवणयोरुपरि प्रकुर्वन्
सङ्केतमावहति चैष कपि र्द्वितीयः ।।

हत्या-बलात्कृतिपरं बहु-भ्रष्टकार्यम्,
उत्कोच-वित्त-परिणाम-महाधनत्वम् ।
नैतद् विलोक्यमिति नेतृजनांस्तृतीयः
सङ्केतयन् कपिरयं नयनं पिधत्ते ।।

गाँधी के वानरों का उपदेश

राजनीति के आश्वासन सब झूठे ही होते हैं,
नेता कहाँ सत्य कहते बस बकते ही रहते हैं ।
मुख पर अपने हाथों को रख पहला बन्दर देखो,
बतलाता है सच मत बोलो राजनीति कुछ सीखो ।।

जब चुनाव का कठिनकाल वह बीत गया क्या डर है?,
जनता तो रोती रहती है क्या इनसे मतलब है? ।
कानों पर रख हाथ दूसरा बन्दर कहता देखो,
कुछ मत सुनना मौज करो अब राजनीति कुछ सीखो ।।

हत्या लूटपाट मत देखो भ्रष्टाचार न देखो,
भरी घूस से तिजोरियाँ पर इनसे आँखें मूँदो ।
आँखें करके बन्द तीसरा बन्दर यह बतलाता,
नेता अपनी आँखों पर पट्टी कर ले सिखलाता ।।

●

अथ तृतीया दीप्तिः

हास्य-दीप्तयः

दाम्पत्य-विषयः

तदा सप्तपदीकृत्ये

पत्नीम् आक्रुश्यमाणस्तु कलहे पतिरेकदा ।
प्रावोचद् यद् यदा ब्रह्मा बुद्धिं दातुं समुत्सुकः ।।

सर्वेषां प्राणिनां तत्र चाऽऽह्वानमकरोद् यदा ।
तदा तं समयं पुण्यं त्यक्त्वा त्वां कुत्र प्रस्थिता ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा पत्नी संक्षुब्धमानसा ।
पतिमाग्नेयनेत्राभ्यां पश्यन्ती प्रत्युवाच यत् ।।

यत्काले भगवान् व्यस्तो बुद्धेर्वितरणे स्वयम् ।
तदा सप्तपदीकृत्ये निमग्नाऽहं त्वया समम् ।।

बद्धमत्स्य इव स्थितिः

वार्त्तालापप्रसंगेऽथ पत्नी पतिमुवाच यत् ।
उपहारान् विवाहात्तु पूर्वं मह्यं निरन्तरम् ।।

नानाविधान् ददासि स्म साम्प्रतं किन्तु हे पते! ।
न तथा कुरुषे तत्र ज्ञातुमिच्छामि कारणम् ।।

पत्न्यास्तत्प्रश्नमाकर्ण्य पतिस्तं सस्मिताननः ।
मन्दं विहस्य प्रत्यूचे पत्नीमेवमिदं वचः ।।

जालबद्धगते मत्स्ये किं तस्मै पुनरप्यहो! ।
त्वमेव ब्रूहि को मूर्खो भोजनानि प्रयच्छति? ।।

पत्न्यो न रुचिराः कथम् ?

यदा सर्वाः कुमार्यस्तु प्रतीयन्ते मनोरमाः ।
तदा कुत इमाः पत्न्य आयान्त्यरुचिरा गृहे? ।।

दुःखं मे चिन्तनं मृषा

एकदा कलहे पत्नीम्पतिरेवम् उवाच यत् ।
सत्त्विकीं त्वां तु मन्ये स्म साध्वीं बुद्धिमतीं तथा ।।

तस्य वाचं समाकर्ण्य पत्नी तम्प्रत्युवाच यत् ।
त्वामहं चाऽपि मन्ये स्म सज्जनं सात्त्विकं नरम् ।।

पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा पतिरूचे पुनस्तदा ।
तवैव चिन्तनं सत्यम् अनुमानं वृथा मम ।।

दाम्पत्य-विषय

साथ तुम्हारे फेरे

कभी कलह में गुस्साये पति ने यह बात कही थी ।
बाँट रहे थे बुद्धि विधाता तब तुम कहाँ गयी थी? ।।

क्रोधित होकर पत्नी ने तब ऐसा उसे सुनाया ।
करके आँखें लाल क्रोध से यह रहस्य समझाया ।।

बाँट रहे जब बुद्धि विधाता आये थे बहुतेरे ।
मैं अभागिनी लगा रही थी साथ तुम्हारे फेरे ।।

फँसी हुई तुम मछली

बातचीत में पत्नी ने जब पति को मारा ताना ।
देते थे विवाह के पहले क्यों उपहार बताना? ।।

किन्तु नहीं देते हो क्यों उपहार मुझे अब लाकर? ।
पत्नी की बातें सुनकर के पति बोला मुस्काकर ।।

तुम कितनी भोली भाली हो इसे न तुमने जाना? ।
फँसी हुई मछली को आखिर कौन डालता दाना? ।।

पत्नी अप्रिय होवे

क्यों शादी के पूर्व कुमारी सबका मन बहलाये ।
पत्नी होते ही जाने क्यों सबका मन घबराये? ।।

मिथ्या अनुमान

कभी कलह में पत्नी से जब पति बोला जलता सा ।
समझा मैंने तुम्हें साधुता और बुद्धि परिभाषा ।।

उसकी बातें सुनकर पत्नी ने भी किया निवेदन ।
मैंने भी मन में सोचा तुम होगे सात्त्विक सज्जन ।।

बातें सुनकर के पत्नी की पति बोला दोबारा ।
सत्य तुम्हारा चिन्तन है मिथ्या अनुमान हमारा ।।

दाम्पत्यं नरकात्मकम्

प्रच्छन्नाः प्रहरिभ्यस्तु मानवा नरकस्थिताः ।
स्वर्गक्षेत्रे प्रवेक्ष्यन्तः निगृहीताः यदाऽभवन् ।।

परन्तु देवदत्तोऽयं स्वर्गं त्यक्त्वा यदैकदा ।
नरके प्रविविक्षुः स द्वाःस्थितै र्निग्रहं गतः ।।

प्रतिहारस्तदा कश्चित् पृष्टवान् यत् कथं त्वया ।
स्वर्गस्थं सुखसौविध्यं त्वक्त्वा नरक इष्यते? ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो जगाद यत् ।
श्रूयते मम भार्याया देहान्तः समजायत ।।

कस्य कष्टं महत्तरम् ?

एकदा यज्ञदत्तस्तु दुःखितश्चिन्तितस्तथा ।
सखायं देवदत्तं स एवं वचनमाह यत् ।।

स्वपूर्वपतिसन्दर्भे मम पत्नी सदा सखे! ।
चर्चां प्रकुरुते नित्यम् इति दुःखं महन्मम ।।

यज्ञदत्तवचः श्रुत्वा देवदत्तोऽपि दुःखितः ।
स्वकष्टविषये तावद् यज्ञदत्तमुवाच यत् ।।

पत्न्यास्ते वचनं सह्यं परं भार्या तु मे सदा ।
भाविनम्पतिमाश्रित्य चर्चां प्रकुरुते सखे! ।।

मम स्वप्ने तु तत्पतिः

एकदा देवदत्तस्तु वार्तालापे स्मिताननः ।
एवमाह निजां भार्याम् उद्विग्नां कर्त्तुमिच्छुकः ।।

प्रत्यहं साम्प्रतं स्वप्ने निशायां प्रतिवेशिनी ।
'लता' नाम्नी समायाति मत्पार्श्वे सहसा प्रिये! ।।

देवदत्तवचः श्रुत्वा तत्पत्नी प्रत्युवाच यत् ।
ब्रूहि सैकाकिनी स्वप्ने त्वत्समीपमुपैति किम्? ।।

पत्न्यास्तत्प्रश्नमाकर्ण्य देवदत्तो जगाद यत् ।
एकाकिनीति सत्यं तत् परं ज्ञातं कथं त्वया? ।।

तस्य पत्नी तदा ब्रूते यतोहि प्रत्यहं निशि ।
लतायाः पतिरायाति मम स्वप्नेषु साम्प्रतम् ।।

यहाँ नरक में आया

नरक निवासी मानव जाते हुये स्वर्ग में छिपकर ।
पहरेदारों ने बाँधा उनको तत्काल पकड़कर ।।

किन्तु स्वर्ग से कभी नरक में घुसना चाहा जैसे ।
देवदत्त को पहरेदारों ने तब पकड़ा वैसे ।।

कहा किसी ने स्वर्ग छोड़कर यहाँ नर्क में आना ।
चाह रहे क्यों देवदत्त तुम हमको सत्य बताना? ।।

सुन करके यह बात 'आह' भर करके तब वह बोला ।
देवदत्त फिर दु:खी हृदय से अपने मुँह को खोला ।।

आज किसी ने स्वर्गवास पत्नी का मुझे सुनाया ।
इसीलिये मैं स्वर्ग छोड़कर यहाँ नरक में आया ।।

दुर्दशा हमारी खलती

यज्ञदत्त ने देवदत्त साथी को कष्ट सुनाया ।
अपनी पत्नी के बारे में दु:ख से यही बताया ।।

शादी के पहले पतियों की बातें करती रहती ।
सुना नहीं जाता है ऐसी बात बहुत ही खलती ।।

ऐसी बातें सुनकर बोला देवदत्त भी दु:ख से ।
मैं भी वंचित हूँ बतलाऊँ तुमको पत्नी सुख से ।।

पत्नी होने वाले पति की बात सर्वदा करती ।
दशा तुम्हारी सहनयोग्य दुर्दशा हमारी खलती ।।

उसका पति आता है

बातचीत में देवदत्त ने पत्नी को बतलाया ।
उसे सताने की नीयत से अपना स्वप्न सुनाया ।।

रोज रात में पास हमारे लता स्वयं ही आती ।
क्या बतलाऊँ तुम्हें प्यार से सारी रात बिताती ।।

देवदत्त की बातें सुनकर पत्नी तत्क्षण बोली ।
बतलाओ क्या पास तुम्हारे आती सदा अकेली ? ।।

बातें सुनकर देवदत्त ने पूँछा मुझे बताना ।
आती है वह लता अकेली कैसे तुमने जाना? ।।

पत्नी बोली इसका कारण मुझे समझ में आता ।
उसका पति मेरे सपनों में सारी रात बिताता ।।

भार्या संन्यासकारणम्

संन्यासिवेशमापन्नं काषाय-वस्त्रधारिणम् ।
पुरुषं पृष्टवान् दीनो देवदत्तो नताऽऽननः ।।

पत्नी मम वशे नास्ति कृपया दिशतां भवान् ।
वशीकरणवृत्तार्थम् उपायं कमपि प्रभो! ।।

देवदत्तस्य तद्वाचं श्रुत्वा साधुः स दुःखितः ।
किञ्चिन्मौनं समालम्ब्य सोच्छ्वासं प्रत्युवाच यत् ।।

सखे! किमपि चाऽज्ञास्यमुपायं यद्यहं तदा ।
संन्यासवेषमेनं वै नाऽग्रहीष्यं कथञ्चन ।।

गृहयुद्धे दिवंगतः

मृत्योराकस्मिकत्वे च कारणं ज्ञातुमिच्छुकः ।
पुलिसस्याऽधिकारी तु सुशीलामेवमाह यत् ।।

कृपया कथ्यतां तावद् धैर्येण यद् भवत्पतिः ।
कारणं किमभूद् रात्रावकस्मान्निधनं गतः? ।।

तस्य प्रश्नं समाकर्ण्य सुशीला प्रत्युवाच यत् ।
प्रवर्तित्ते तु सामान्ये गृहयुद्धे दिवंगतः ।।

युवत्यां सस्पृहास्तु ते

एकदा देवदत्तस्य पत्नी तं निजगाद यत् ।
अहं च तव माता च त्वं चैवेमे त्रयो जनाः ।।

यद्येकस्यां हि नौकायाम् आरुह्य सुखपूर्वकम् ।
नौकाविहारं कुर्वाणाः प्रविशेयुः सरोवरे ।।

परन्तु तत्र दुर्भाग्यात् निमज्जेत् तरणिस्तदा ।
ब्रूहि कां पूर्वमुद्धर्त्तुं त्वं प्रयासं विधास्यसि? ।।

पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
त्वामेव रक्षितुं पूर्वं प्रयासं करवाण्यहम् ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा भार्या बुद्धिमती तदा ।
मन्दं मन्दं विहस्यैव देवदत्तं ब्रवीति यत् ।।

अरे! तत्र त्वया वृद्धा ध्यातव्या जननी तदा ।
यतो मां बहवस्त्रातुं युवका उद्यता ध्रुवम् ।।

क्यों होता संन्यासी ?

गेरुआधारी वस्त्र लपेटे सन्यासी को देखा ।
देवदत्त के मन में फैली जिज्ञासा की रेखा ।।

बोला मेरी पत्नी मेरे वश में कैसे आये? ।
कृपया वशीकरण का मुझको कोई मंत्र बतायें ।।

देवदत्त की बातें सुनकर वह संन्यासी बोला ।
क्षणिक मौन निःश्वास छोड़ता इस रहस्य को खोला ।।

पत्नी को वश में करने की होती बुद्धि जरा सी ।
तुम्हीं बताओ मित्र! भला क्यों मैं होता संन्यासी? ।।

गृह-युद्धों में मारा

हुई अचानक मृत्यु किसी की कोलाहल था भारी ।
तभी वहाँ पर जाँच के लिये गया पुलिस अधिकारी ।।

पूछा उसकी पत्नी से यह कैसे हुआ अचानक ।
बोली तभी सुशीला पत्नी होकर के नतमस्तक ।।

थोड़ा सा गृह युद्ध हुआ था उनका साथ हमारे ।
जिसमें घायल होकर के वे तत्क्षण स्वर्ग सिधारे ।।

युवती में अनुरक्ति

पत्नी बोली देवदत्त से थोड़ा सा मुस्काकर ।
हम दोनों हैं तीन तुम्हारी माँ को साथ मिलाकर ।।

तीनों नौका पर सवार हो जल विहार को जायें ।
नौका डूबे सभी डूबने लगें निकल न पायें ।।

पहले माँ को या मुझको चाहोगे किसे बचाना? ।
निःसंकोच पूछती हूँ हे प्रियतम! सत्य बताना ।।

बातें सुनकर के पत्नी की देवदत्त बेचारा ।
बोला पहले तुम्हें बचाने का कर्तव्य हमारा ।।

पति की बातें सुनकर पत्नी का चेहरा मुस्काया ।
अपने युवती होने का माहात्म्य उसे समझाया ।।

बोली मुझे नहीं बूढ़ी जननी को आप बचायें ।
मुझे बचाने हेतु न जाने कितने साथी आयें ।।

अनेकाः प्रमिणः प्रभो !

हत्याऽभियोगमापन्नं पुरुषं प्राह विस्मितः ।
न्यायाधीशो यदेवं त्वं कथं क्रोधसमन्वितः ।।

स्वपत्नीं हतवान् किन्तु न तस्याः प्रेमिणं तदा ।
गोलिकायाः प्रहारेण नाशं कर्त्तुं समुद्यतः? ।।

न्यायाधीशस्य तत्प्रश्नं श्रुत्वा स पुरुषस्तदा ।
सरोषभावमान्नः प्रत्युवाच नताऽऽननः ।।

कियन्तः प्रेमिणस्तस्या वध्याः स्युस्तन्मया प्रभो! ।
भार्यैव गोलिका द्वारा तत्क्षणं सा विनाशिता ।।

निजस्वप्ने करोषि किम् ?

एकदा देवदत्तस्य भार्या रोषपरायणा ।
देवदत्तमुवाचैवं सदा युद्धरता गृहे ।।

अत्यन्तं हीनवृत्तस्त्वं पतितोऽसि तथैव च ।
पतिरूपेण मत्वा त्वां लज्जामनुभवाम्यहम् ।।

चकितो देवदत्तोऽथ श्रुत्वा भार्यावचस्तदा ।
यदा कारणमपृच्छत् तदा सा पतिमाह यत् ।।

रात्रौ स्वप्ने मया दृष्टं यद् भगिन्या समं मम ।
एकान्ते विहसन् वार्त्तां प्रकरोषि मुहुर्मुहुः ।।

पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
परन्तु स तु स्वप्नोऽभूत् वृथा त्वं चिन्तिता कथम्? ।।

पत्युस्तदुत्तरं श्रुत्वा पत्नी रोषान्विता पुनः ।
क्रुश्यन्ती देवदत्तं सा पुनरेवं जगाद यत् ।।

यदा स्वप्ने मदीये मे कुकृत्यं कुरुषे तथा ।
निजस्वप्ने तदा किं किं न जाने क्रियते त्वया? ।।

भार्या मे सिंहसदृशी

पूर्वं शल्यचिकित्सातः चिकित्सक उवाच यत् ।
रक्तवर्गमहं पत्न्यास्तव ज्ञातुं हि कामये ।।

चिकित्सकवचः श्रुत्वा देवदत्त उवाच यत् ।
सिंह्या रुधिरमप्यस्यै भवान् दातुं समीहते ।।

पति एक प्रेमी अनेक

पत्नी हत्या का अपराधी न्यायालय में आया ।
हो करके आश्चर्यचकित जज ने यह प्रश्न सुनाया ।।

क्यों पत्नी के प्रेमी को छोड़ा पत्नी को मारा ।
साफ-साफ बतलाओ मुझको क्या उद्देश्य तुम्हारा? ।।

जज की बातें सुनकर के अपराधी बोला तत्क्षण ।
पत्नी की हत्या का उसने यह बतलाया कारण ।।

जानें कितने प्रेमी हैं मैं कैसे मारूँ सबको ।
इसीलिये मैंने गोली से मार दिया था उसको ।।

तेरे मेरे सपने

लड़ने को तैयार,कर्कशा पत्नी ने धमकाया ।
देवदत्त को धिक्कारा गुस्से में यही सुनाया ।।

नीच दुराचारी होकर तुम कितने हो उत्पाती ।
तुमको पति मानते हुये अब मुझको लज्जा आती ।।

अचरज से तब देवदत्त ने पूछा इसका कारण ।
गुस्से से काँपती हुयी तब पत्नी बोली तत्क्षण ।।

मैंने देखा सपने में एकान्त कक्ष में घुसकर ।
मेरी छोटी बहना से बातें करते हँस-हँसकर ।।

बातें सुनकर के पत्नी की देवदत्त घबराया ।
बोला यह तो सपना है फिर कहाँ सत्य हो पाया ।।

देवदत्त की बातें सुनकर के तब पत्नी बोली ।
खूब समझती हूँ मैं तुमको मुझे न समझो भोली ।।

यदि मेरे सपने में ऐसा निन्दित कार्य करोगे ।
तो अपने सपने में जानें क्या-क्या करते होगे? ।।

बनी शेरनी पत्नी

अस्पताल में देवदत्त से बोला डाक्टर तत्क्षण ।
पहले होना आवश्यक पत्नी का रक्त परीक्षण ।।

देवदत्त ने कहा महोदय नहीं आप घबरायें ।
होकर के निश्चिन्त शेरनी का भी रक्त चढ़ायें ।।

योग्यास्त्यक्त्वा पलायिताः

एकदा देवदत्तस्य पत्नी संक्षुब्धमानसा ।
कुपिता कलहे गेहे देवदत्तं ब्रवीति यत् ।।

पूर्वं मम विवाहस्य प्रस्तावेषु न संशयः ।
त्वत्तो योग्यतमाश्चाऽऽसन् पुरुषा बहवः परम् ।।

महद् दुर्भाग्यमेतन्मे यत्प्राप्तस्त्वादृशः पतिः ।
अकर्मण्यस्तथा हीनो धिया शून्यस्तथैव च ।।

पत्यास्तद्वचनं श्रुत्वा संक्षुब्धः कुपितस्तथा ।
देवदत्तोऽपि साक्रोशं पत्नीमेवम् उवाच यत् ।।

सत्यं तद् बुद्धिमन्तस्ते योग्या आसन् नरा यतः ।
योग्यताकारणादेव त्यक्त्वा त्वां ते पलायिताः ।।

पति नैव पलायते

गृहस्याऽन्तर्विवादे तु संक्षुब्धः पतिरेकदा ।
पत्न्या अभिमुखो भूत्वा वाक्यमेवम् उवाच यत् ।।

तथा तर्जयसे वाग्भिः प्रायशो मां निरन्तरम् ।
यथा कश्चित्तु संसारे भृत्यं चापि न तर्जयेत् ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा पत्नी संक्षुब्धमानसा ।
पतिमाग्नेयनेत्राभ्यां पश्यन्ती निजगाद यत् ।।

कथं तर्जयितुं शक्यो भृत्य एवं निरन्तरम् ।
तथा हि तर्जनेनाऽसौ न भवेत् किं पलायितः? ।।

महत्ता भार्यया कृता

पत्न्याः सन्तर्जनं श्रुत्वा क्षुब्धः पतिरुवाच यत् ।
कथं धर्षयसे देवि! माम् एवं हि निरन्तरम् ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा पत्नी तत्रैवमाह यत् ।
त्वां महापुरुषं तावद् विधातुं कामये यतः ।।

तुलसी-कालिदासाद्याः श्रूयन्ते बहवो नराः ।
स्वपत्नीनां तिरस्कारैर्महत्त्वं लेभिरे भुवि ।।

यह अयोग्यता मेरी

कभी कलह में देवदत्त को पत्नी ने बतलाया ।
अपने विवाह के पहले का अपना प्रभाव समझाया ।।

आये थे प्रस्ताव बहुत शादी के पहले मेरे ।
तुमसे भी अत्यधिक योग्यताधारी थे बहुतेरे ।।

यह मेरा दुर्भाग्य तुम्हारे जैसे पति को पाया ।
कितने हो अयोग्य यह मेरी आज समझ में आया ।।

पत्नी की बातों से क्रोधित देवदत्त गुस्साता ।
बोला मुझे पता है तुझको नहीं समझ में आता ।।

मुझसे भी थे योग्य सभी वे और कहूँ क्या आगे ।
इसीलिए तो तुम्हें देखते ही वे सारे भागे ।।

पति का भाग न जागा

कभी घरेलू झगड़े में खिसियाकर पति गुर्राया ।
पत्नी के सामने पहुँचकर ऐसा प्रश्न सुनाया ।।

जैसा तिरस्कार करती हो तुम मेरा पग-पग में ।
नौकर का भी तिरस्कार क्या हो सकता है जग में? ।।

ऐसी बातें सुनकर पत्नी भी बोली गुर्राती ।
बड़े क्रोध से उसको आँखे लाल-लाल दिखलाती ।।

कैसे तिरस्कार नौकर का ऐसा हो सकता है? ।
यदि उसको खल जाय छोड़ सब घर से भग सकता है ।।

महापुरुष तब होना

पत्नी के अति तिरस्कार से दुःखी हुआ बेचारा ।
पति बोला क्यों करती हो इतना अपमान हमारा ।।

पत्नी बोली महापुरुष मैं चाहूँ तुम्हें बनाना ।
पत्नी के ही तिरस्कार से हुये अनेक न जाना? ।।

कालिदास तुलसी जैसों को पत्नी ने धिक्कारा ।
तभी हुये थे महापुरुष वे मान रहा जग सारा ।।

हानिरत्र त्वया कृता

कृपणः पुरुषः कश्चित् पत्नीमेवम् उवाच यत् ।
रक्षितं व्ययमकृत्वा मयाऽद्य रूप्यकद्वयम् ।।

कथं तत्कृतवान्? एवं पृष्टे स प्रत्युवाच यत् ।
पृष्ठतो बसयानस्य धावन् गृहमिहाऽऽगतः ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा पत्नी क्षुब्धा ब्रवीति यत् ।
अपव्ययं धनस्याऽत्र त्वया किं नैव लक्षितम्? ।।

यदि त्वम् अनुधावन् वै टैक्सीयानस्य पृष्ठतः ।
आगमिष्यस्तदा लाभः पञ्चाशद् रूप्यकैर्मतः ।।

मन्दता शिरसि स्मृता ?

वार्त्तालाप-प्रसङ्गेऽथ देवदत्तो यदैकदा ।
गृहिणीं निजगादैवं तर्कपूर्णमिदं वचः ।।

मानवानां शरीरस्य यदङ्गं स्यात् सुदुर्बलम् ।
तत्रैवाऽऽक्रमणं रोगाः प्रायः कुर्वन्ति सर्वदा ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा तत्पत्नी सस्मितानना ।
मन्दं मन्दं विहस्याऽथ देवदत्तमुवाच यत् ।।

सत्यमेव ब्रवीषि त्वम् अद्यैवाऽवगतं मया ।
यत्कथं स्वशिरःपीडां प्रायश्चर्चयते भवान् ।।

मूर्खतां स ददौ कथम् ?

एकदा कलहे गेहे पतिः संक्षुब्धमानसः ।
पत्नीमाक्रोशभावेन वचनं त्वेवम् आह यत् ।।

न जाने हेतुना केन तुभ्यं स चतुराननः ।
सौन्दर्येण समं तावत् मूर्खतामपि दत्तवान् ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा तूष्णीम्भावमपास्य सा ।
पत्नी रोषसमाविष्टा पतिमेवम् उवाच यत् ।।

सौन्दर्यं दत्तवान् ब्रह्मा मह्यमेतद् विचार्य यत् ।
प्रस्तावं स्वविवाहस्य स्वयं मां कथयिष्यसि ।।

मूर्खतां दत्तवान् एतद् विचार्य मे प्रजापतिः ।
यदहं स्वीकरिष्यामि प्रस्तावं सहसा तव ।।

हानि-लाभ यह कैसा ?

कभी कृपण पति ने पत्नी को निजपुरुषार्थ बताया ।
बोला प्रिये! आज तो मैंने दो रूपये बचाया ।।

पत्नी बोली कैसे तुमने दो रूपंये बचाया ।
बोला पति बस के पीछे मैं आज भागता आया ।।

पति की बातें सुनकर पत्नी दुःख से बोली ऐसे ।
यह तो हुआ अपव्यय तुमने कहाँ बचाये पैसे? ।।

यदि टैक्सी के पीछे-पीछे आप दौड़ते आते ।
निश्चय पचास रुपये आज फोकट में नहीं गँवाते ।।

दर्द सदा रहता है

कभी हास परिहास काल में पत्नी से पति बोला ।
बुद्धिहीनता क्यों होती है इस रहस्य को खोला ।।

मानव का जो अंग यहाँ पर तन में दुर्बल होता ।
निश्चय ही वह अंग बेचारा सब रोगों को ढोता ।।

पति की बातें सुनकर पत्नी बोली कुछ मुस्काती ।
पति को महामूर्खता का अपने आभास कराती ।।

दुर्बल है मस्तिष्क तुम्हारा मुझको सच लगता है ।
इसीलिये तो सिर में प्रायः दर्द बना रहता है ।।

दिया मूर्खता क्यों है ?

कभी कलह में क्रोधित होकर पति बोला झल्लाया ।
पत्नी को अतिमूर्ख निरूपित करते हुये सुनाया ।।

जाने क्यों ब्रह्मा ने ऐसा अनुचित कार्य किया है ।
सुन्दरता के साथ मूर्खता का उपहार दिया है? ।।

पति की बातें सुनकर पत्नी भी बोली झल्लाती ।
सुन्दरता मूर्खता किसलिये हेतु उसे समझाती ।।

सुन्दरता इसलिये दिया हो जिससे आप प्रभावित ।
मुझसे खुद विवाह करने को स्वयं करें प्रस्तावित ।।

दिया मूर्खता ब्रह्मा ने किसलिये बताऊँ साथी! ।
जिससे मैं प्रस्ताव तुम्हारा स्वयं न ठुकरा पाती ।।

पतिस्ते कुरुतां स्वस्थम्

एकदा स्वसखीं गीतां निजगाद रमा त्विदम् ।
शिरःपीडाऽस्ति मे तीव्रा लाभो नैवौषधेन च ।।

तस्य तद्वाचमाकर्ण्य गीता ताम्प्रत्युवाच यत् ।
यदा मे जायते पीड़ा देवदत्तस्तु मे पतिः ।।

नीत्वा शिरः स्वकीयाऽङ्के शनैराश्लिष्य चैव माम् ।
मुहुः परिमृजन्नास्ते शिरोर्तिरहिता ततः ।।

तदाकर्ण्य रमा तत्र गीतामेवम् उवाच यत् ।
यद्येवं तर्हि तेनैव पीडामपनयाम्यहम् ।।

कथं जानासि तत्स्वादम् ?

नीरसं स्वादहीनं च भुञ्जानो भोजनं यदा ।
क्षुब्धः पतिरुदासीनः पत्नीमेवम् उवाच यत् ।।

त्वयाऽद्य भोजनं तावन्निर्मितं कीदृशं त्विदम् ।
गोमयस्येव स्वादोऽस्य न किंचिदपि रोचते ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा पत्नी खिन्नाऽवदत् तदा ।
गोमयस्य कदा स्वादः पुरा चाऽऽस्वादितस्त्वया? ।।

स्वभावे तव विस्मृतिः

एकदा नगरस्याऽथ प्रसिद्धे भोजनालये ।
कृपणो देवदत्तस्तु सपत्नीकः प्रविष्टवान् ।।

स पत्नीमब्रवीत् तत्र यद् वयमत्र हे प्रिये! ।
एकैकमपरं तावत् मिष्ठान्नं भक्षयामहे ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा तस्य पत्नी तु तत्क्षणम् ।
कुर्वन्ती विस्मयं प्राह देवदत्तमिदं वचः ।।

''एकैकम् अपरम्'' एवं कथं वाक्यं ब्रवीषि भो! ।
अधुना त्वेकमप्यत्र मिष्ठान्नं नैव भक्षितम् ।।

पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो जगाद यत् ।
अरे! त्वं तु सदा शीघ्रं विस्मरस्येव सर्वथा ।।

स्मर यद् विगते वर्षे यदाऽत्र वयमागताः ।
एकैकमिह मिष्ठान्नं तदाऽस्माभिस्तु भक्षितम् ।।

पीड़ा हरे हमारी

किसी सखी ने किसी सखी को कभी कहीं बतलाया ।
बड़ी दवा की किन्तु दूर सिर दर्द नहीं हो पाया ।।

कहा सखी ने तभी सखी की ऐसी बातें सुनकर ।
मुझको तो जब भी हो जाता है सिरदर्द भयंकर ।।

मेरे पति श्री देवदत्त जी उसे दूर कर देते ।
हाथ फेरते धीरे-धीरे आलिंगन कर लेते ।।

ऐसी बातें सुनकर के तब बोली वह बेचारी ।
ऐसा है तो उनसे होगी पीड़ा दूर हमारी! ।।

स्वाद ये कैसे जाना ?

स्वादहीन नीरस भोजन को पति ने थोड़ा खाकर ।
होकर के संक्षुब्ध कहा पत्नी को तभी बुलाकर ।।

कैसा खाना आज बनाया तुमने पागल होकर? ।
मुझे स्वाद में लगता यह तो जैसे बिलकुल गोबर ।।

पत्नी बोली पति की बातों से चेहरा गुस्साया ।
कैसे पता चला तुमको कब तुमने गोबर खाया? ।।

भूल नहीं वह पाया

महानगर में पाँच सितारा होटल जिसके द्वारे ।
देवदत्त जी सपत्नीक जब उसमें कभी पधारे ।।

बोले कुछ विश्राम करें श्रीमती यहाँ अब आयें ।
लड्डू एक और खाकर के घर हम वापस जायें ।।

विस्मित होकर पत्नी बोली पति की बातें सुनकर ।
क्या कहते हो और एक हम दोनों खायें मिलकर? ।।

किन्तु अभी तो एक भी नहीं खाया हम दोनों ने ।
बातें सुनकर महाकृपण पति उसको लगा बताने ।।

याद नहीं रहता स्वभाव से तुम हो बड़ी भुलक्कड़ ।
कैसे मैं समझाऊँ तुमको तुम हो बड़ी विलक्षण ।।

याद करो गतवर्ष तुम्हारे साथ यहाँ मैं आया ।
हम दोनों ने एक-एक ही तो लड्डू था खाया ।।

रमन्ते कुत्र देवताः ?

भार्यायाः पादसंवाहं वस्त्रप्रक्षालनं तथा ।
प्रत्यहं वीक्ष्य कुर्वन्तं देवदत्तं मनस्विनम् ।।

पप्रच्छुः कारणं तत्र सखायो विस्मिता यदा ।
असौ तान् उक्तवान् एवं तदा गम्भीरया गिरा ।।

देवान् प्रीणयितुं काङ्क्षे शास्त्रेषु कथितं यथा ।
‘‘यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः’’ ।।

भार्या तु त्रिमुखी स्मृता

प्रारम्भिक-त्रिवर्षेषु विवाहाऽनन्तरं सखे! ।
विद्यते पतये तावत् पत्नी चन्द्रमुखी सदा ।।

ततो वर्षत्रयं यावद् अस्ति सूर्यमुखी च सा ।
प्राप्ते तु सप्तमे वर्ष पत्नी ज्वालामुखी भवेत् ।।

मृग्याः सिंहः पलायते

कार्यालये तु वेपन्ते यद्भयात् कर्मचारिणः ।
वीरविक्रमसिंहोऽभूत् नाम तस्य नरस्य वै ।।

गृहे भार्याभयादेष उच्चैरपि न भाषते ।
पूर्वजैः सत्यम् उक्तं यत् ‘‘मृगात् सिंहः पलायते’’ ।।

स्यातां कौ मध्यमोत्तमौ ?

प्रथमायां निशायां वै विवाहाऽनन्तरं पतिम् ।
व्याकरणस्य विद्वांसं नवोढा निजगाद यत् ।।

प्रथमः पुरुषश्चाऽसि त्वमेव मम जीवने ।
संगतः स्नेहसंसिक्त इति सत्यं ब्रवीमि ते ।।

पत्यास्तद्वचनं श्रुत्वा पप्रच्छ तां पतिस्तदा ।
मध्यमः पुरुषः कस्ते? उत्तमः पुरुषश्च कः? ।।

कहाँ देवता रहते ?

पैर दबाना नहीं भूलता था पत्नी का प्रतिदिन ।
उसके कपड़ों का भी करता देवदत्त प्रक्षालन ।।

उसके मित्रों ने ऐसा जब उसको करते देखा ।
फैल गयी सब की आँखों में तत्क्षण विस्मयरेखा ।।

बोले ऐसा क्यों करते हो क्या है इसका कारण? ।
देवदत्त ने कहा देव सन्तुष्ट रहेंगे श्रीमन् ।।

शास्त्रों ने भी लिखा जहाँ हम नारी पूजा करते ।
वहीं हमारे सभी देवता आकर सुख से रहते ।।

त्रिमुखी भार्या देखी

पहले तीन साल तक पत्नी "चन्द्रमुखी" कहलाये ।
पति को प्यारी लगे सर्वदा उसका मन बहलाये ।।

तीन साल के बाद वही फिर "सूर्यमुखी" हो जाती ।
उसके बाद सदा पति को बन "ज्वालामुखी" डराती ।।

सिंह भागता मृग से

जिसके भय से क़ार्यालय में सभी काँपते रहते ।
वीर विक्रम सिंह नाम से सभी सराहा करते ।।

किन्तु वही जब घर में आता कुछ न बोलता मुख से ।
सही कहा पुरखों ने ऐसा "सिंह भागता मृग से" ।।

कौन पुरुष हैं दोनों ?

शादी बाद सुहागरात में पत्नी बोली पति से ।
जो थे वैयाकरण यशस्वी बुद्धिमान थे सबसे ।।

प्रथम पुरुष हैं आप हमारे इस जीवन में निश्चित ।
इसीलिये यह तन मन सारा तुमको किया समर्पित ।।

बोले वैयाकरणी जी फिर मन में कुछ पछताते ।
कौन तुम्हारे उत्तम मध्यम पुरुष देवि! कहलाते? ।।

कारागारे सुखी भवान्

कारागारे वसानं च काचित् पत्नी निजं पतिम् ।
यत् पत्रं प्रेषयामास तत्रेयं पङ्क्तिरादिमा ।।

अत्राऽहं सर्वथा वर्त्ते प्रसन्ना कुशलान्विता ।
मन्ये तत्र भवांश्चाऽपि भवेत् सकुशलः सुखी ।।

निजमातुर्गृहं गता

कलहैः पीडिता पत्नी पतिमेवम् उवाच यत् ।
मातुर्गेहं गमिष्यामि सम्प्रत्यद्यैव निश्चितम् ।।

पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा पतिस्तु विस्मिताननः ।
मन्दं मन्दं विहस्याऽथ भार्यां स निजगाद यत् ।।

तव माता गृहे नाऽस्ति निरर्थं गमनं यतः ।
असावपि पतिं युद्ध्वा निजमातुर्गृहं गता ।।

दैवज्ञास्तत्र मौनिनः

ज्यौतिषा निजपञ्चाङ्गे व्यर्थमेव लिखन्ति यत् ।
प्रभावो ग्रहणादीनां वर्त्तते जीवने महान् ।।

न सूर्यग्रहणस्याऽभूत् प्रभावो मम जीवने ।
न चन्द्रग्रहणस्याऽपि प्रभावो लक्षितो मया ।।

एकस्य ग्रहणस्यैव प्रभावो यस्तु लक्षितः ।
तत्पाणिग्रहणं चाऽस्ति दैवज्ञास्तत्र मौनिनः ।।

अहमस्मि गृहस्वामी

कलहे प्रवर्त्तमाने तु पतिपत्न्योस्तु मध्यगे ।
यदाऽऽक्रान्तवती पत्नी पतिर्भीत्वा पलायितः ।।

पलाय्य स च खट्वाया नीचैर्गूढोऽभवद् यदा ।
'रे भीरो! बहिरायाहि' पत्नी तम् एवमाह्वयत् ।।

समाह्वानं सरोषं तत् श्रुत्वा पतिरुवाच यत् ।
अहमस्मि गृहस्वामी निःसरिष्ये यदृच्छया ।।

सुखी जेल में कैसे ?

भेजा पत्र जेल में पति को पत्नी ने यह लिखकर ।
मैं हूँ कुशलपूर्वक घर में समाचार सब सुखकर ।।

वहाँ आप भी कुशलपूर्वक होंगे ऐसी आशा ।
सदा सुखी हों प्रियतम मेरे ऐसी है अभिलाषा ।।

गयी मायके माँ भी

कभी कलह से पीड़ित पत्नी ने पति को धमकाया ।
अभी जा रही हूँ माँ के घर सुनो समझ में आया ।।

पत्नी की बातें सुनकर के पति बोला मुस्काता ।
कुछ कहना है प्रिये! यहाँ आओ विश्वास दिलाता ।।

घर में नहीं तुम्हारी माँ है व्यर्थ रहेगा जाना ।
वह भी लड़कर गयी मायके पड़ सकता पछताना ।।

ग्रहण एक ही जाना

लिखते हैं पञ्चाग ज्योतिषी ग्रहण लगेगा भारी ।
सब बिलकुल बकवास समझ लो यह मान्यता हमारी ।।

नहीं प्रभाव रहा जीवन में कोई सूर्यग्रहण का ।
चन्द्रग्रहण से भी न कभी भी मेरा माथा ठनका ।।

एक ग्रहण का ही प्रभाव मैंने जीवन में जाना ।
पाणिग्रहण नाम से जिसको सब लोगों ने माना ।।

घर का मालिक मैं हूँ

पति-पत्नी के युद्धस्थल में तभी वीर रस जागा ।
पत्नी से भयभीत हुआ पति घर के अन्दर भागा ।।

जाकर छिपा चारपाई के नीचे ही वह जैसे ।
बाहर निकल कहा पत्नी ने वहाँ छिपा है कैसे? ।।

आवाहन सुन कहा यहाँ से क्यों मैं बाहर निकलूँ ।
मैं इस घर का मालिक हूँ मेरा मन चाहे जहाँ रहूँ ।।

द्रौपदी पञ्चभर्तृका

द्यूत-क्रीडानिमग्नं तु दृष्ट्वा सातिशयं पतिम् ।
यदा न्यवारयत् पत्नी रुष्टः पतिरुवाच यत् ।।

दीव्यति द्वापरे यो वै धर्मराजो युधिष्ठिरः ।
तथा क्रीडाम्यहं द्यूतम् आपत्तिस्तत्र ते कथम्? ।।

पत्युस्तद्वचनं श्रुत्वा पत्नी शान्तमुवाच यत् ।
विस्मर्त्तव्यं च नाप्येतद् द्रौपदी पञ्चभर्तृका ।।

नरके निवसाम्यहम्

सरोषं कलहे पत्नी पतिमेवम् उवाच यत् ।
विवाहात् प्राक् तु मां तावद् बहुधैवं त्वमुक्तवान् ।।

नाऽहं स्वर्गेऽपि वत्स्यामि क्षणमात्रं त्वया विना ।
नरकेऽपि त्वया सार्धं सदैव वस्तुम् उद्यतः ।।

ततः क्रोधाभिभूतायाः कर्कशायास्तु दुःखदम् ।
पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा पतिरेवम् उवाच यत् ।।

सत्यं ब्रवीषि भो देवि! दुर्भाग्यं मम वर्त्तते ।
यदयम् अभिलाषो मे पूर्णीभूतोऽस्ति साम्प्रतम् ।।

एकमेवाऽवगच्छामि

एकदा यज्ञदत्तो वै देवदतं च पृष्टवान् ।
विभिन्नानां तु धर्माणां रहस्यं कथयस्व माम् ।।

मित्रस्य वचनं श्रुत्वा देवदत्तः स्मिताऽऽननः ।
मन्दं मन्दं विहस्यैवं यज्ञदत्तमुवाच यत् ।।

हिन्दूधर्मस्य किं तत्त्वं बौद्धधर्मस्य किं तथा ।
ईसाई-धर्मतत्त्वं किम्? मुस्लिमानां च किंभवेत्? ।।

स्वरूपं सिख-धर्मस्य जैन-धर्मस्य किं च वा? ।
नाऽहं जानामि तत्सर्वम् इति दुःखं सदैव मे ।।

एकस्यैवाऽथ धर्मस्य तत्त्वं जानामि सर्वथा ।
कथयन्ति जना लोके तं धर्मं मासिकं सखे! ।।

●

मैं द्रौपदी बनूँगी

जुआ खेलना ठीक नहीं है पत्नी ने जब टोका ।
क्रोधित होकर तभी जुआरी पति ने उसको रोका ।।

धर्मराज युधिष्ठिर भी जब जुआ खेलते सारे ।
क्यों बेकार पड़ी रहती हो पीछे सदा हमारे ।।

पत्नी बोली तुम भी खेलो मैं भी चुप न रहूँगी ।
धर्मराज तुम बनो युधिष्ठिर मै द्रौपदी बनूँगी ।।

अब तो नरक निवासी

कभी कलह में पत्नी ने पति को गुस्से से ताका ।
बोली शादी के पहले क्या तुमने मुझे कहा था ।।

बिना तुम्हारे कभी स्वर्ग में भी न रहूँगा प्यारी ।
साथ नरक में भी रह लूँगा बातें सत्य हमारी ।।

जलती हुई क्रोध से पत्नी की ये बातें सुनकर ।
समझाया पति ने पत्नी को तब कुछ ऐसा कहकर ।।

कहती हो तुम सत्य देवि! दुर्भाग्य हमारा आया ।
नरक निवासी का तुमने सपना साकार बनाया ।।

मासिक-धर्म न जाना ?

यज्ञदत्त ने देवदत्त से कहा मित्र बतलायें ।
क्या रहस्य होता धर्मों का आज मुझे समझायें? ।।

ऐसी बातें सुनकर के तब देवदत्त मुस्काया ।
थोड़ा हँसकर यज्ञदत्त को उसने यही बताया ।।

क्या है हिन्दूधर्म यहाँ क्या बौद्ध धर्म है भाई ।
क्या है मुस्लिम धर्म यहाँ क्या धर्म यहाँ ईसाई ।।

सिक्ख धर्म है कौन कहाँ से जैन धर्म है आया ।
सत्य बताऊँ साथी अब तक नहीं समझ मैं पाया ।।

एक धर्म का ही रहस्य जीवन में जाना मैंने ।
कहा यहाँ पर जिसको मासिक-धर्म सभी ने ।।

●

प्रेमिका-विषयः

अवेहि मम चातुर्यम्

एकदा युवकः कश्चिद् युवतीं काञ्चिदाह यत् ।
अरे! किं त्वं मया साकं विवाहं रचयिष्यसि? ।।

तच्छ्रुत्वा युवती प्राह यदहं चतुरं तथा ।
वीरं च युवकं नित्यं विवाहे कामये सदा ।।

युवत्या वचनं श्रुत्वा युवकस्तं जगाद यत् ।
किमेतद् विस्मरस्यत्र यदहं त्वां पुरैकदा ।।

निमज्जन्त्यां तु नौकायां दृष्ट्वा नद्यां मुहुर्मुहुः ।
तीर्त्वा नदीं तव प्राणान् रक्षितुं कृतनिश्चयः ।।

युवकस्य वचः श्रुत्वा संस्मृत्य तस्य वीरताम् ।
विवाहात् तं निराकर्त्तुं युवती पुनराह यत् ।।

तदर्थं तु कृतज्ञाऽहं मत्वा तव पराक्रमम् ।
परन्तु नैव चातुर्यं जानामि ते किमप्यहम् ।।

युवत्या वचनं श्रुत्वा चतुरो युवकस्तु सः ।
मन्दं मन्दं विहस्यैवं सुन्दरीं प्रत्युवाच यत् ।।

शृणु भो! नैव जानासि रहस्यं तद् वदाम्यहम् ।
छिद्रं तस्यां हि नौकायां मयैव प्रकृतं तदा ।।

त्वादृशा बहुप्रेमिणः

प्रेमिकाया गृहे गत्वा तस्याः पितरमेकदा ।
स्वामिनं कोटिरूप्याणां देवदत्तो जगाद यत् ।।

भवदीया सुताऽत्यन्तं प्रेमाऽऽविद्धा मया समम् ।
विवाहाऽर्थमपि प्रायो बहुधा निजगाद माम् ।।

देवदत्तवचः श्रुत्वा प्रेमिकायाः पिता तदा ।
स्वागतं तस्य कुर्वाण एवं वचनमाह यत् ।।

द्वाविंशः पुरुषश्चाऽसि त्वमत्र यं सुता मम ।
तथाविधं वचो दत्त्वा समाश्वस्तं करोति सा ।।

प्रेमिका-विषय

देखी मेरी चालाकी ?

किसी युवक ने कभी किसी युवती से कहा बतायें।
मुझसे ब्याह करेंगी कृपया साफ-साफ समझायें ।।

बोली युवती चाह रही हूँ जो मैं तुमसे कहना।
जो हो वीर चतुर मैं चाहूँ उसको साथी चुनना ।।

उसकी बातें सुनकर के वह बोला धाक जमाता।
भूल गयी वीरता हमारी स्मरण नहीं क्यों आता? ।।

कभी डूबती नौका में था मैंने तुम्हें बचाया।
अपने हाथों तुम्हें तैरकर नदी पार ले आया ।।

कहा युवक की बातें सुनकर युवती ने भी तत्क्षण।
फिर भी ब्याह नहीं करने का यह बतलाया कारण ।।

मुझे बचाया एतदर्थ वीरता तुम्हारी मानी।
किन्तु चतुर हो कितने तुम यह अभी न मैंने जानी ।।

बातें सुनकर के युवती की युवक तभी मुस्काया।
अपनी चालाकी को उसने सप्रमाण बतलाया ।।

पानी भरने से जो नौका डूब रही थी जल में।
चालाकी से मैंने ही तो छेद किया था उसमें ।।

सब को देती आश्वासन

कोई प्रेमी किसी प्रेमिका के घर भागा-भागा।
गया पिता थे नगर सेठ जी उनसे रिश्ता माँगा ।।

बोला सुता आपकी मुझको बहुत चाहती श्रीमन्।
चाह रही है साथ हमारे शुभ-विवाह का बन्धन ।।

बातें सुनकर तभी प्रेमिका-पिता वहाँ पर बोला।
स्वागत करते हुये प्यार से इस रहस्य को खोला ।।

बाइसवें अभ्यर्थी हो तुम लगते हो अति सज्जन।
किन्तु हमारी बेटी सबको देती है आश्वासन ।।

वरं वृद्धो धनी पतिः

एकदा युवकः कश्चित् सुन्दरी यवतीं स्वयम् ।
विवाहस्याऽथ प्रस्तावं कथयन् निजगाद यत् ।।

सुन्दरोऽहं युवा स्वस्थः परन्तु निर्धनः प्रिये! ।
पतिरूपेण तेऽवश्यम् उपयुक्तश्च स्यामहम् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा युवती सा सुदर्शना ।
मन्दं मन्दं विहस्यैवं युवकं प्रत्युवाच यत् ।।

यदि वृद्धस्तथाऽस्वस्थः परन्तु धनिको भवेः ।
तदा त्वं मत्कृते नूनम् उपयुक्ततरः पतिः ।।

इदम् आश्चर्यमष्टमम्

एकदा प्रेमिकायास्तु कस्मिंश्चिदातुरालये ।
ज्ञात्वा नियोजनं तावत् प्रेमी पत्रं लिलेख यत् ।।

इच्छामि यदहं रुग्णो भूत्वा तत्राऽऽतुरालये ।
प्रविष्टः स्यां तथा त्वं च परिचर्यां कुरुष्व मे ।।

तस्य पत्रं समासाद्य प्रेमिकाऽपि लिलेख यत् ।
संसारस्य तदाश्चर्यम् अष्टमं भविता यतः ।।

अहं साम्प्रतमेतस्मिन् नगरस्याऽऽतुरालये ।
प्रसूति-कक्ष-कर्त्तव्यं निर्वहामि नियोजिता ।।

एतत् कस्याऽऽपणस्य भो !

एकदा देवदत्तस्य प्रेमिका स्वगृहे यदा ।
निमन्त्र्य देवदत्तं च विशेषाऽऽग्रहपूर्वकम् ।।

नानाभोज्यानि वस्तूनि स्वादिष्ठानि प्रियाणि च ।
सोत्साहं भोजयित्वा सा पप्रच्छ कीदृशानि भो? ।।

देवदत्तस्तु भोज्यानां पदार्थानां पुनः पुनः ।
प्रशंसां बहु कुर्वाणः प्रेमिकामेवम् आह यत् ।।

स्वादिष्ठं सर्वमेवाऽस्ति ज्ञातुमिच्छाम्यहं परम् ।
समानीतमिदं सर्वं कस्मादेवाऽऽपणात् प्रिये! ।।

अगर धनी तुम होते

किसी युवक ने कभी सुन्दरी युवती को बतलाया।
कर लेवे विवाह उससे वह यह प्रस्ताव सुनाया ।।

सुन्दर स्वस्थ युवा होकर भी मैं हूँ केवल निर्धन।
फिर भी तुम्हें बहुत सुख दूँगा देता हूँ आश्वासन ।।

उसकी बातें सुन करके युवती बोली मुस्काती।
सुन उसका प्रस्ताव वहीं अपना मन्तव्य सुनाती ।।

बूढ़े रोगी होकर के भी अगर धनी तुम होते।
मेरे पति होने का अवसर कभी नहीं फिर खोते ।।

जीवन धन्य बनायें

किसी चिकित्सालय में कोई नर्स नौकरी करती।
प्रेमी को जब पता चला तो उसने चिट्ठी लिख दी ।।

लिखा पत्र में यही कामना मैं हो जाऊँ रोगी।
वहाँ तुम्हारी सेवा पाकर बड़ी तसल्ली होगी ।।

पाकर पत्र लिखा उसने भी मन में दबा ठहाका।
यह होगा आश्चर्य आठवाँ निश्चय ही दुनियाँ का ।।

मैं हूँ यहाँ प्रसूतिकक्ष में जब भी चाहें आयें।
आ करके मातृत्व लाभ से जीवन धन्य बनायें ।।

भोजन कहाँ से आया ?

देवदत्त को कभी प्रेमिका देती हुई निमन्त्रण।
घर आने के लिये किया था उससे नम्र निवेदन ।।

उसे परोसा आने पर नाना प्रकार के व्यंजन।
पूछा खाते समय बताओ प्रियतम! कैसा भोजन? ।।

देवदत्त ने कहा प्रियतमे! भोजन है अति सुन्दर।
किन्तु जानने की इच्छा है एक प्रश्न का उत्तर ।।

सब कुछ है स्वादिष्ट यहाँ जो तुमने मुझे खिलाया।
सत्य बताओ ऐसा भोजन किस दुकान से आया? ।।

विवाहबन्धनं भिन्द्धि

येन केनाऽप्युपायेन वशीकर्त्तुं समुत्सुकः ।
विवाहितो नरः कश्चित् प्रेमिकामेवम् आह यत् ।।

यदि त्वं कथयेस्तावद् गगनादपि हे प्रिये! ।
तारकांस्त्रोटयित्वा च त्वदर्थम् आनयाम्यहम् ।।

प्रेमिणो वचनं श्रुत्वा प्रेमिका सा तु तत्क्षणम् ।
धर्षयन्तीव वाग्बाणैर्वचनं तम् उवाच यत् ।।

जानामि साहसं तेऽहं कि मुधैव विकत्थसे ।
त्रोटयस्व ततः पूर्वं विवाह-बन्धमेव तम् ।।

निर्धना अविवाहिताः

सुन्दर्यो निर्धना लोके सर्वदा प्रेमिणो बहून् ।
प्राप्नुवन्ति विनाऽऽयासम् इति सत्यं तु वर्त्तते ।।

कदाचिदपि किन्त्वेताः प्रयासैर्बहुभिः कृतैः ।
नैकं चाऽपि पति लोके प्राप्नुवन्तीति कष्टदम् ।।

सुन्दरीभिर्वृतं जगत्

उपेक्षावृत्तिमालक्ष्य प्रेमिणश्चैकदा रुषा ।
प्रेमिका निजगादैव स्वकीयम्प्रेमिणं तदा ।।

बहुवारं तु मां तावत् पूर्वं कथयसि स्म यत् ।
सम्पूर्ण एव संसारस्तुच्छस्त्वत्पुरतो भवेत् ।।

परन्तु साम्प्रतं नैव तादृशं वचनं त्वया ।
मदर्थम् उच्यते स्निग्धं किमत्र कारणं भवेत्? ।।

तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा प्रेमी तं निजगाद यत् ।
मम सांसारिके ज्ञाने साम्प्रतं वृद्धिरागता ।।

तोड़ो विवाह का बन्धन

रूठी हुई प्रेमिका वश में करने की अभिलाषा ।
लेकर कहा विवाहित कोई देता हुआ दिलासा ।।

तुम्हें चाहता हूँ कितना मैं कैसे तुम्हें बताऊँ? ।
अगर कहो तो तारे नभ से अभी तोड़ ले आऊँ ।।

बातें सुनते ही उसका तब और चढ़ गया पारा ।
अपमानित करके उसको यह कहा और धिक्कारा ।।

कितने हैं साहसी आप यह मुझे पता है श्रीमन् ।
तारों से पहले तोड़ो वह शुभ-विवाह का बन्धन ।।

निर्धन अविवाहित होती

सुन्दरियाँ निर्धन होकर भी प्रेमी को पा जायें ।
अनायास ही सभी सुलभ हैं प्रेमी जिसे बनायें ।।

किन्तु नहीं पति को पाती हैं ये निर्धन सुन्दरियाँ ।
इनके लिये निरर्थक होती शुभ विवाह की दुनियाँ ।।

जग को मैंने पहचाना

कभी उपेक्षा के कारण हो दुःखी प्रेमिका बोली ।
किसी और से प्रेम तुम्हारा मुझे समझते भोली? ।।

पहले कहते तुच्छ जगत् है प्रिये! तुम्हारे आगे ।
किन्तु न कहते हो अब वैसा रहते भागे-भागे ।।

नहीं समझती हूँ मैं इसका क्या हो सकता कारण? ।
ऐसी बातें सुनकर के वह प्रेमी बोला तत्क्षण ।।

पहले बिना ज्ञान के मैंने तुमको ही जग माना ।
किन्तु बढ़ा जब ज्ञान तभी जग को मैंने पहचाना ।।

पूर्वमेव हि जागर्मि

वार्त्तालाप-प्रसङ्गे च देवदत्तस्त्वथैकदा ।
स्वकीयां प्रमिकां स्निग्धं वाक्यमेतद् उवाच यत् ।।

प्रातः प्रातर्यदैवाऽहं सुप्त्वोत्तिष्ठामि हे प्रिये! ।
तदा मम विचारेषु त्वमेवाऽऽयासि सर्वदा ।।

देवदत्तवचः श्रुत्वा प्रेमिका सा ब्रवीति यत् ।
इदमेव तु वाक्यं मां यज्ञदत्तोऽपि भाषते ।।

देवदत्तस्तदा ब्रूते सत्यं स्यात् किन्त्वहं सदा ।
पूर्वमेव हि जागर्मि यज्ञदत्तादपि प्रिये! ।।

नलस्तु न समागतः

जलौघेन समस्ता वै ग्रामा आप्लाविता यदा ।
गृहे गृहे च पानीयं प्रविष्टमभवत् तथा ।।

द्योतयन्ती तदा दुःख दमयन्ती ब्रवीति यत् ।
अहो! आश्चर्यम् अद्याऽपि नलस्तु न समागतः ।।

किमाश्चर्यमतः परम्

कृष्णानां कुन्तलानां ते च्छायायां सर्वदा त्वहम् ।
समग्रं जीवनं स्वीयं व्यत्येतुं कामये प्रिये! ।।

विवाहात् पूर्वमित्येवं कथयन्ति स्म ये सदा ।
त एव पुरुषास्तावद् विवाहाऽनन्तरं परम् ।।

भोजने द्विदले दृष्ट्वा त्वेकं चाऽपि शिरोरुहम् ।
कोपेनाऽग्निमया जाताः किमाश्चर्यम् अतः परम् ।।

पहले मैं जग जाता

बातचीत में देवदत्त बोला विश्वास दिलाता।
लगता है हम दोनों का है जनम जनम का नाता।।

रोज सबेरे उठता हूँ जब नींद हमारी जाती।
मन में मेरे तुम्हीं सर्वदा सबसे पहले आती।।

बातें सुनकर तभी प्रेमिका ने उसको बतलाया।
इसी तरह से यज्ञदत्त ने भी है मुझे सुनाया।।

देवदत्त ने कहा सत्य है वह भी ऐसा कह ले।
किन्तु जागता हूँ मैं प्रातः यज्ञदत्त से पहले।।

आज नहीं 'नल' आया

डूबा सारा गांव बाढ़ में जल ही जल था छाया।
दूषित पानी घर घर में पर पेय जल नहीं पाया।।

दुःखित तभी दमयन्ती के मन में यह भाव समाया।
अचरज है क्यों आज अभी तक घर में 'नल' न आया।।

क्यों अचरज मेरे भाई

तेरे काले केशों की छाया में जीवन सारा।
चाह रहा हूँ सदा बिताना जो कहता बेचारा।।

आज वही प्रेमी विवाह के बाद आँख दिखलाता।
एक बाल भी दिखे दाल में तो फिर सबक सिखाता।।

गुस्से में हो लाल और बीबी की करे धुनाई।
है विवाह के बाद यही अचरज क्यों मेरे भाई!।।

चुम्बनेऽपि कथं प्रश्नः ?

बहुकालस्य पश्चात्तु देवदत्तस्त्वथैकदा ।
रहः सामीप्यमालभ्य प्रेमिकां निजगाद यत् ।।

किमहं चुम्बनं तेऽत्र कर्त्तुं शक्नोमि हे प्रिये?।
तच्छ्रुत्वा प्रेमिका किञ्चित् न तदा प्रत्युवाच तम् ।।

तस्या मौनं समालक्ष्य देवदत्तो पुनर्यदा ।
द्वि-त्रिवारं तमपृच्छत् न चैवोत्तरमाप्तवान् ।।

अथ क्षुब्धो यदा प्राह ब्रूहि भो! बधिराऽसि किम्?।
प्रेमिकाऽपि तदा क्षुब्धा घूर्णयन्ती मुहुर्मुहुः ।।

सरोषभावमापन्ना देवदत्तं ब्रवीति यत् ।
विकलाङ्गोऽसि किं यत्त्वं पृच्छसीह पुनः पुनः? ।।

त्वादृश्यो बहुप्रेमिकाः

सरोषा प्रेमिका पत्रे प्रेमिणं तु लिलेख यत् ।
प्रत्यावर्त्तय मे च्छायाचित्रं शीघ्रमितः परम् ।।

बह्वीनां सुन्दरीणां च चित्राणां सञ्चयं तदा ।
सम्प्रेष्य प्रेमिकायै स प्रेमी पत्रे लिलेख यत् ।।

छायाचित्रं निजं नीत्वा त्वेतस्माच्चित्र-सञ्चयात् ।
चित्राण्यन्यानि मत्पार्श्वे प्रेष्यन्तां कृपया पुनः ।।

अनेकाः प्रमिकास्तावत् त्वादृश्यो मम सन्त्यतः ।
कथमप्यधुना तेऽहं न स्मरामि मुखाकृतिम् ।।

●

विकलाङ्गता हुई क्या ?

कई दिनों के बाद प्रेमिका को समीप में पाकर ।
देवदत्त ने कहा प्यार से उसको पास बिठाकर ।।

प्रिये! कहो क्या ले सकता हूँ चुम्बन यहाँ तुम्हारा? ।
मौन रही प्रेमिका जल गया देवदत्त बेचारा ।।

उसे देखकर मौन कहा दो-तीन बार फिर वैसे ।
किन्तु रही वह मौन न बोली कुछ न सुना हो जैसे ।।

बोला कुछ न सुनाई देता क्या तू बिलकुल बहरी? ।
ऐसा सुनकर तभी प्रेमिका हद से ज्यादा बिफरी ।।

बोली क्या विकलांग हो गये पूछ रहे क्यों ऐसे? ।
अगर नहीं कुछ कर सकते तो दूर हटो फिर मुझसे ।।

आकृति याद नहीं है

किसी प्रेमिका ने क्रोधित हो पत्र लिखा प्रेमी को ।
कृपया वापस करें शीघ्र ही आप हमारी फोटो ।।

चित्रों के बण्डल के संग में लिखा पत्र भी आया ।
जिसको पढ़कर बड़े जोर से उसका सिर चकराया ।।

कृपया अपना फोटो लेकर शेष सभी लौटायें ।
सारे फोटो क्यों भेजा यह कारण जान भी जायें ।।

बहुत प्रेमिकायें तुम जैसी मुझे हुआ भ्रम भारी ।
किसी तरह भी याद नहीं अब आकृति आज तुम्हारी ।।

●

राजनीति-विषयः

भूते दत्तं न विस्मार्यम्

समाज सेवकः कश्चिन्नेता स्वकीय-भाषणे ।
जनान् सम्बोधयंस्तत्र सबलं वाक्यमाह यत् ।।

कृपया भूतकालस्थं सर्वं विस्मृत्य साम्प्रतम् ।
भविष्यं चिन्तनीयं चेद् देशस्य प्रगतिस्तदा ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कश्चित् श्रोतृषु संस्थितः ।
नरस्तत्र समुत्थाय सहसा प्रत्युवाच यत् ।।

कृपया भूतकाले यद् भवते दत्तवान् अहम् ।
रूप्यकाणि सहस्रं तद् विस्मार्यं न कदाचन ।।

उद्घाटन-द्वयं कार्यम्

विलम्बेन समुत्थाय प्रातः प्रातर्यदा क्वचित् ।
नेता कश्चित् समारोहे गन्तुकामो यदाऽभवत् ।।

निर्गन्तुमुद्यतं दृष्ट्वा विना स्नानादिकं तथा ।
नेतारमब्रवीत् तत्र तत्पत्नी विस्मिताऽऽनना ।।

कथं त्वं भो! विना स्नानं जलपानं विना तथा ।
गृहान्निर्गच्छसि प्रातः समारोहेषु साम्प्रतम्? ।।

पत्न्यास्तद्वचनं श्रुत्वा नेता तत्र ससम्भ्रमः ।
गृहात् सपदि निर्गच्छन् पत्नीमेवम् उवाच यत् ।।

स्नानागारस्य नव्यस्य कृत्वा चोद्घाटनं प्रिये! ।
शुभारम्भोऽस्ति कर्त्तव्यो जलपान-गृहस्य च ।।

राजनीति-विषय

भूतकाल मत भूलो

सामाजिक नेता जी कोई देकर अपना भाषण ।
इसी बात पर जोर दिया यह करते हुये निवेदन ।।

कृपया भूतकाल को भूलें आप सभी श्रोतागण! ।
करना है अब हमें देश के ही भविष्य का चिन्तन ।।

श्रोताओं के मध्य तभी कोई श्रोता चिल्लाया ।
बड़े जोर से नेता जी को यह सन्देश सुनाया ।।

एक हजार रुपये मेरे पहले कभी लिए जो ।
कृपया उसको भूल न जाएँ लौटा देवें हमको ।।

दोनों उद्घाटित करना

उठा सबेरे कोई नेता जैसे ही बिस्तर से ।
जाने को तैयार हो गया जल्दी-जल्दी घर से ।।

स्नान और जलपान बिना ही उसको जाते देखा ।
पत्नी के चेहरे में फैली लम्बी विस्मय रेखा ।।

बोली बिना नहाये खाये आप किसलिये जायें ।
इतनी जल्दी क्यों है मुझको साफ-साफ बतलायें? ।।

पत्नी की बातों को सुनता नेता कुछ घबड़ाता ।
बोला प्रिये बहुत जल्दी है घर से पाँव बढ़ाता ।।

स्नानागार नवीन बना है बना वहीं जलपान भवन ।
दोनों का करना है जाकर मुझको ही उद्घाटन ।।

फलम् अनशनस्य तत्

बहुकालस्य पश्चात्तु नेतुः कस्यचिदेकदा ।
गृहे सुतः समुत्पन्नः कृशकायः सुदुर्बलः ।।

तं तथा दुर्बलं दृष्ट्वा नेतुर्भार्या तदा पतिम् ।
धर्षयन्ती स्ववाग्बाणैरेवं वचनम् अब्रवीत् ।।

बुभुक्षा-हड़तालेषु बहुधाऽनशनेषु च ।
व्यापृतो दृश्यसे यत्त्वं तस्यैव फलमस्ति भो! ।।

हृदयं परिवर्त्तितम्

परित्यज्य दलं स्वीयं नेतारो ये तु साम्प्रतम् ।
दलेष्वन्येषु गच्छन्ति विश्वासघातकास्तु ते ।।

परन्तु दलमन्यं ये त्यक्त्वाऽऽयान्ति निजे दले ।
हृदयस्य परीवर्त्तस्तत्कृते कथ्यतेऽधुना ।।

समाचारान् विवर्जयेत्

नेता चिकित्सकम्प्राह किमहं करवाणि यत् ।
हृद्रोगो नैव वर्धेत ममायं तदितः परम् ।।

नेतुस्तद्वचनं श्रुत्वा मन्दस्मितिपुरःसरम् ।
चिकित्सकोऽपि नेतारं तदैवम्प्रत्युवाच यत् ।।

परिवर्त्तनसम्बद्धाः वृत्तान्ताः मन्त्रिमण्डले ।
ये समाचारपत्रेषु मुद्र्यन्ते नैव तान् पठेत् ।।

परस्परं भावयन्तः

दस्यवो राजनेतृणां छायामाश्रित्य हर्षिताः ।
नेतारश्चाऽपि दस्यूनाम् आश्रयेण प्रफुल्लिताः ।।

शास्त्रसिद्धम् इदं कार्यं ये निन्दन्ति विरोधिनः ।
वराकास्ते न जानन्ति रहस्यं परमं यतः ।।

गीतायां भगवान् कृष्णः स्वयमेवोक्तवांस्तथा ।
''परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ'' ।।

अनशन का फल कैसा ?

बहुत दिनों के बाद किसी नेता का घर भी महका ।
जन्म दिया उसकी पत्नी ने दुबला पतला लड़का ।।

उसे देखते ही पत्नी का चेहरा था गुस्साया ।
बोली पति को खूब घूरती हुयी समझ में आया? ।।

और भूख हड़ताल कीजिये देखा उसका प्रतिफल ।
भोग रहा है यह बच्चा बेचारा कितना दुर्बल? ।।

हुआ हृदय-परिवर्तन

अपने दल को छोड़ दूसरे के दल में जो जाये ।
अस्थिरमति वह व्यक्ति सदा विश्वासघाती कहलाये ।।

किन्तु दूसरे दल को छोड़े निज दल में जब आए ।
हुआ 'हृदय-परिवर्तन' उसका यह घोषणा कराये ।।

सुदृढ़ हृदय बनाएँ

डॉक्टर से नेता जी बोले मुझको सत्य बताओ ।
हृदय रोग की वृद्धि न हो कोई उपाय समझाओ ।।

नेता जी की बातें सुनकर डाक्टर वह मुस्काता ।
बोला नेता जी से तत्क्षण यह उपाय समझाता ।।

मंत्री पद से हटने का हो समाचार यदि छपा कहीं ।
खतरा हो सकता है उसको पढ़ें आप सर्वथा नहीं ।।

कर सहयोग परस्पर

चोर लुटेरे नेताओं के संरक्षण से हर्षित ।
नेता उनके योगदान से रहते सदा प्रफुल्लित ।।

शास्त्रोचित है कार्य, विरोधी फिर भी जान न पायें ।
ऐसे लोगों को बतलाओ हम कैसे समझायें? ।।

गीता में भगवान् कृष्ण ने स्वयं कहा है ऐसे ।
आपस में सहयोग बढ़ाओ फिर असफलता कैसे? ।।

भाग्यं फलति सर्वत्र

कस्यचित् कृषकस्याऽऽसन् चत्वारस्तनयाः प्रियाः ।
त्रयस्तत्र कुशाग्रास्ते नित्यम् अध्ययने रताः ।।

एकश्चिकित्सको जातस्त्वभियन्ता तथाऽपरः ।
अधिवक्ता तृतीयश्च प्रसिद्धः समपद्यत ।।

परम् एको महामूर्खश्चतुर्थस्तनयोऽभवत् ।
नित्यम् अध्ययनाद् दूरो विद्या-श्रम-विवर्जितः ।।

कक्षायां स दशम्यां तु द्विरनुत्तीर्णतां गतः ।
किंकर्त्तव्यविमूढात्मा राजनीतौ प्रविष्टवान् ।।

विधायकपदे भूत्वा प्रत्याशी स त्वथैकदा ।
कथञ्चिद् विजयं प्राप्य शिक्षामन्त्रित्वमाप्तवान् ।।

स्मरामि बहुधाऽत्रोक्तं पूर्वजैः सत्यमेव यत् ।
''भाग्यं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम्'' ।।

परधर्मो भयावहः

दास्यवं मन्यमानं तु निकृष्टं कर्म चैकदा ।
दस्युः कश्चिद् यदा चैच्छत् कर्त्तुमात्मसमर्पणम् ।।

राजनेता तदा ब्रूते तमेवं स्निग्धया गिरा ।
निवारयन् दस्युमेनं तस्माद् आत्मसमर्पणात् ।।

निर्वाचनं न जेष्यामि त्वद्विनाऽहं कथञ्चन ।
पश्यामि न च कल्याणं तवाऽप्यन्यत्र कर्मणि ।।

कृष्णश्चाऽपि गीतायां भगवानुपदिदेश यत् ।
''स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'' ।।

भाग्य की ही प्रबलता

किसी युवक के चार पुत्र थे बड़ा सुखी था घर में ।
किन्तु तीन ही तेज बुद्धि वाले थे सभी सुतों में ।।

एक चिकित्सक हुआ दूसरा अभियन्ता था भाई ।
हुआ वकील तीसरा नामी करता खूब कमाई ।।

चौथा महामूर्ख था उसका पुत्र बड़ा आवारा ।
कभी न पढ़ता सिर्फ घूमता समय बिताता सारा ।।

फेल हुआ दोबार न दसवीं क्लास पास कर पाया ।
किंकर्तव्यविमूढ़ हुआ वह राजनीति में आया ।।

प्रत्याशी वह बनकर जीता घोषित हुआ विधायक ।
शिक्षा मंत्री आज हो गया वही पुत्र नालायक ।।

कहा पूर्वजों ने शास्त्रों ने सत्य मुझे भी लगता ।
विद्या-पौरुष व्यर्थ सभी हैं भाग्य सर्वदा फलता ।।

अच्छी है मृत्यु स्वधर्म में

दस्युधर्म से हटकर कोई डाकू आत्मसमर्पण ।
करना चाह रहा था अपने जीवन में संशोधन ।।

कहा राज-नेता ने उससे बोलो मेरे भाई ।
डाकू धर्म छोड़ने की कैसे योजना बनाई? ।।

बिना तुम्हारे जीत न पाऊँगा विश्वास हमारा ।
डाकू धर्म छोड़कर होगा क्या कल्याण तुम्हारा? ।।

गीता में भगवान् कृष्ण का पढ़ सन्देश अभागे ।
अच्छी है मृत्यु स्वधर्म में अन्यधर्म के आगे ।।

नेता सर्वत्र पूज्यते

विद्वत्त्वं राजनेतृत्वं नैव तुल्यं कदाचन ।
गृहेऽपि नाऽर्च्यते विद्वान् नेता सर्वत्र पूज्यते ।।

विद्यारम्भे विवाहे च दुर्भिक्षे जनविप्लवे ।
रोगे शोके जलौघे च नेता सर्वत्र व्यापकः ।।

ज्ञान-विज्ञान-गोष्ठीषु मुख्यवक्ता भवत्यसौ ।
पतिः सर्वसभानां च सर्वज्ञानमयो हि सः ।।

वित्तं गृहणाति श्रेष्ठिभ्यो मतं गृहणाति निर्धनात् ।
सर्वं भोग्यं नयत्येष तस्मान्नेताऽयम् उच्यते ।।

असारे खलु संसारे नेता सर्वार्थसाधकः ।
रमन्ते सुखभोग्येषु नेतृत्वम्प्राप्य मानवाः ।।

सुरक्षा मन्त्रिणां कथम् ?

भ्रष्टाचारं वर्धमानम् उन्मूलयितुमिच्छुकः ।
युवकानाम् महासंघो निर्णयं कृतवांश्च यत् ।।

भ्रष्टाचारेषु लिप्ता ये जनास्तेषाम् इतः परम् ।
सार्वजनिकरूपेणाऽपमानो हि विधास्यते ।।

आकर्ण्य घोषणामेनां शासनेन तु मन्त्रिणाम् ।
सुरक्षाया व्यवस्था च महती सुदृढ़ा कृता ।।

आश्वासनस्य साफल्यम्

जलौघेन समस्ता वै ग्रामा आप्लाविता यदा ।
तन्निरीक्ष्य तदा नेता भाषणे निजगाद यत् ।।

पानीयस्य व्यवस्था च ग्रामे ग्रामे विधास्यते ।
यथोक्तं घोषणापत्रे तत्तु सम्पादितं स्वतः ।।

नेता सबका साधक

राजनीति विद्वत्ता में है विद्वत्ता ही दूषित ।
घर में भी विद्वान् नहीं घर बाहर नेता पूजित ।।

विद्यारम्भ विवाह पड़े दुर्भिक्ष बाढ़ आ जाये ।
रोग-शोक जैसा भी कुछ हो नता तत्क्षण आये ।।

जो भी ज्ञान गोष्ठियाँ होती मुख्य अतिथि बन जाता ।
सभी सभाओं में आगे बैठा रहता मुस्काता ।।

धन लेता सेठों से नेता निर्धन से मत लेता ।
सबका जो उपभोग करे बस इसीलिये तो नेता ।।

साररहित यह जग है जिसमें नेता सबका साधक ।
इसकी कृपा दृष्टि के आगे कौन बनेगा बाधक? ।।

क्या भ्रष्टाचारी नेता ?

भ्रष्टाचार मिटाने का संकल्प हृदय में आया ।
कुछ युवकों ने मिलकर के ऐसा संगठन बनाया ।।

जनता के सामने करें भ्रष्टाचारी को दण्डित ।
ऐसा निर्णय किया सभी युवकों ने फिर तो निश्चित ।।

सुनी घोषणा शासन ने भी तत्क्षण कदम उठाया ।
सभी मंत्रियों की रक्षा पहले से और बढ़ाया ।।

आश्वासन सफल हमारा

कहीं बाढ़ के पानी से जब डूब गये थे गाँव सभी ।
भाषण देने हेतु हमारे प्रिय-नेता जी गये तभी ।।

बोले पानी हेतु व्यवस्था की जो हम ने बात कही ।
देखो कितना शुभ-लक्षण है वह तो अपने आप हुई ।।

नेतारो दस्यवः समाः ?

अन्तःप्रेरणया कश्चिद् दस्युस्त्यक्त्वा तु दस्युताम् ।
आत्म-समर्पणं कृत्वा कारागारे प्रविष्टवान् ।।

निजैराचरणैर्भद्रैः कारागारेऽप्यसौ नरः ।
व्यतीत्य पञ्च वर्षाणि शीघ्रं मुक्तः कथञ्चन ।।

राजनीति-सुसम्बद्धाः कारागारमुखे तदा ।
कार्यकर्त्तार आगत्य सस्नेहं तं वदन्ति यत् ।।

अस्मदीये दले भूत्वा प्रविष्टः कृपया भवान् ।
नेतृत्वं कुरुतां तावद् एतद्धि कामयामहे ।।

तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां स नरः प्रत्युवाच यत् ।
द्वितीयेन पथा नाऽहं पुनरिच्छामि दस्युताम् ।।

निरर्था पदयात्रा सा

विधायकपदं यैश्च प्राप्तं वा सांसदं पदम् ।
यैस्तु मन्त्रिपदं प्राप्तं राज्यपालपदं तथा ।।

प्रधानमन्त्रिणो यैर्वा प्राप्तं राष्ट्रपतेः पदम् ।
ध्रुवं सुसफला तेषां पदयात्रा हि भारते ।।

निरर्था पदयात्रा तु श्रीविनोबा-महात्मनः ।
येनैकमपि न प्राप्तं पदं स्वाधीनभारते ।।

रावणः स्वयम् आगतः

दशम्यामेकदा कश्चित् नेतारमथ सादरम् ।
दशाननस्य दाहार्थं समारोहे न्यमन्त्रयत् ।।

नेता महोदयश्चाऽपि स्वकीये कर-पंकजे ।
धनुर्गृहीत्वा दाहार्थं सभामध्ये समुद्यतः ।।

प्रक्षेप्तुम् अग्निबाणं च संकल्पं कृतवान् यदा ।
तदैव जनसम्मर्दे ध्वनिरेवं श्रुतिं गतः ।।

आश्चर्यं महदाश्चर्यं जनाः पश्यन्तु साम्प्रतम् ।
"दशाननस्य दाहार्थं रावणः स्वयमागतः" ।।

●

फिर से डाकू क्या बनना ?

कभी हृदय से करुणा आई डाकू हुआ प्रभावित ।
अच्छा बनने की इच्छा से निज को किया समर्पित ।।

पाँच साल तक रहा जेल में वह बेचारा जाकर ।
अपने सदाचार से छूटा निकला जैसे बाहर ।।

वहाँ उपस्थित नेताओं की भीड़ लगी थी भारी ।
कोई सूट-बूट में था तो कोई खद्दरधारी ।।

बोले सभी हमारे दल में आप महोदय आयें ।
दें हमको नेतृत्व हमारे दल को सफल बनायें ।।

बातें सुनकर के वह बोला नहीं मुझे कुछ कहना ।
नहीं दूसरे पथ से चाहूँ फिर से डाकू बनना ।।

निष्फल ऐसी पदयात्रा

कोई हुआ विधायक तो कोई सांसद कहलाया ।
कोई मंत्री राज्यपाल भी कोई गया बनाया ।।

है प्रधानमंत्री तो कोई यहाँ राष्ट्रपति भी है ।
सबको तो पद मिला यहाँ जिसने पदयात्रा की है ।।

किन्तु विनोबा भावे की पदयात्रा रही निरर्थक ।
मिला नहीं जिनको कोई पद भारत में भी अब तक ।।

खुद रावण आया है

किसी दशहरे में आयोजक नेता के घर धाए ।
रावण के पुतले में आग लगाने को ले आए ।।

भीड़ बीच नेता जी आए देखा धनुष उठाया ।
आग लगाने को पुतले में उस पर बाण चलाया ।।

अग्निबाण जब फेंक रहे थे तभी एक ध्वनि आई ।
भीड़ बीच सबके कानों में जोरों से टकरायी ।।

देखो भाई बड़ा अचम्भा आज यहाँ छाया है ।
इस पुतले में आग लगाने खुद रावण आया है ।।

●

न्यायालय-विषयः

नाऽहम् आगतवान् स्वयम्

पुराऽपि बहुधा चोक्तं यत्पुनस्ते मुखाकृतिम् ।
न्यायालये न चेच्छामि द्रष्टुं किन्तु त्वमागतः? ।।

न्यायाधीशस्य तद्वाक्यं श्रुत्वा चौरो ब्रवीति यत् ।
भगवन्! नाऽत्र दोषो मे यतो हि बहुधा स्वयम् ।।

तान् राजपुरुषान् एनं निर्देशं भवतामहम् ।
उक्तवान् किन्तु तैरेव निगृह्य प्रापितस्त्विह ।।

अन्यत् पञ्च प्रमाणानि

वादे प्रवर्त्तमाने तु सहसा तत्र सत्वरम् ।
अभियुक्तं तु निर्दोषं प्रमणीकर्त्तुम् इच्छुकः ।।

न्यायाधीश-समक्षं यत् एकं फाईलपत्रकम् ।
प्रस्तुवन् प्राह वाक्कीलो न्यायाधीशमिदं वचः ।।

एतस्मिन् फाइले तानि प्रमाणानि भवन्ति वै ।
येन ममाऽभियुक्तस्तु निर्दोषः सिध्यति प्रभो! ।।

नीत्वा तत्फाइलं न्यायाधीशेनोद्घाटितं यदा ।
स तत्र शतरूप्याणां दश नोटानि दृष्टवान् ।।

तद् आलक्ष्य च विद्वान् स न्यायाधीशो जगाद यत् ।
अस्तु पञ्च प्रमाणानि प्रदेयानि त्वया पुनः ।।

नरः स्वैरी सदाचारी ?

एकदा देवदत्तस्तु विवाह-च्छेदमिच्छुकः ।
न्यायाधीश-समक्षं च सवक्तव्यमुवाच यत् ।।

केनचित् पुरुषेणाऽथ सार्धं पत्नी मम प्रभो! ।
ह्यस्तने दिवसे नद्यास्तीरे मे दृष्टिमागता ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा न्यायाधीशस्तमाह यत् ।
त्वं कथं तद्दिने नद्यास्तीरे ब्रूहि गतोऽभवः? ।।

न्यायाधीशस्य तत्प्रश्ने देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
भ्रमणार्थं गतोऽभूवं सुन्दर्या समम् एकया ।।

न्यायालय-विषय

अपराधी मैं नहीं महोदय

पहले बहुत कहा था तुमको यहाँ कभी मत आना ।
नहीं चाहता तुम्हें देखना सूरत नहीं दिखाना ।।

जज की ऐसी बातें सुनकर कहा चोर ने साहब ।
आना नहीं चाहता था मैं जबरन लाये हैं सब ।।

कहा पुलिस वालों को ये सब किन्तु नहीं ये मानें ।
अपराधी मैं नहीं महोदय इसे सत्य ही जानें ।।

पाँच प्रमाण और दे दो

कभी किसी न्यायालय में अधिवक्ता भागे भागे ।
लेकर फाइल अपराधी की आये जज के आगे ।।

आते ही जज की टेबिल पर वह फाइल सरकाया ।
बोला है निर्दोष हमारा अपराधी जो आया ।।

इस फाइल में वे प्रमाण हैं जिनसे होता साबित ।
अपराधी को दण्डित करना हो सकता है अनुचित ।।

खोला फाइल जज ने देखा वे प्रमाण थे जिसमें ।
सौ सौ के दश नोट रखे थे पड़े दिखाई उसमें ।।

फिर तो न्यायाधीश महोदय धीरे से मुस्काये ।
पाँच प्रमाण और तुम दे दो यह निर्देश सुनाये ।।

सदाचार यह स्वैरी

देवदत्त ने हाथ जोड़कर जज से किया निवेदन ।
पत्नी से तलाक लेने को आया हूँ मैं श्रीमन् ।।

किसी पुरुष के साथ गयी थी कल वह नदी किनारे ।
मैंने देखा घूम रही थी आगे आप विचारें ।।

जज ने पूँछा आप वहाँ किसलिये गये बतलायें ।
कारण बिना बताये कैसे हम फैसला सुनायें ।।

यही कहा तब देवदत्त ने जज की बातें सुनकर ।
वहीं घूमने निकला था मैं एक सुन्दरी लेकर ।।

न्यायो वाक्कीलमाश्रितः

चौरकर्माऽभियुक्तस्तु न्यायाधीशमुवाच यत् ।
मुच्यतां कृपया चाऽनुग्रहो मयि विधीयताम् ।।

तस्य विलपनं श्रुत्वा न्यायाधीशो जगाद यत् ।
किं त्वया प्रथमं वारं चौरकार्यमिदं कृतम्? ।।

प्रश्नमेनं समाकर्ण्याऽभियुक्तः प्रत्युवाच यत् ।
मया तु बहुधा चौर्यं कृतं दण्डं च लब्धवान् ।।

परन्तु मम वाक्कीलः प्रथमं वारमेव सः ।
न्यायालयेऽभियुक्तस्य पक्षे वादार्थम् आगतः ।।

आयाहि मे गृहे दिने

न्यायालये समायाते निर्णये श्राविते तथा ।
हृष्टोऽभियोगमुक्तः सन् निर्दोषत्वमुपाश्रयन् ।।

धन्यवादं तु विज्ञाप्य वाक्कीलम्प्राह तस्करः ।
अभियोगादहं मुक्तस्तवैव कृपया प्रभो! ।।

शीघ्रमेवाऽऽगमिष्यामि पुनश्च भवतां गृहे ।
कृतज्ञतां स्मरिष्यामि मिष्ठान्नसहितं तथा ।।

तच्छ्रुत्वा स तु वाक्कीलो विहस्य तमुवाच यत् ।
दिने तत्र त्वामायाहि निशायां न कदाचन ।।

नाऽयं हन्ति न हन्यते

हत्याया अभियोगस्तु यदा सिद्धोऽभवत् तदा ।
न्यायाधीशोऽभियुक्ताय मृत्युदण्डं प्रदत्तवान् ।।

मृत्युदण्डं समाकर्ण्य त्वभियुक्तोऽपि निर्भयः।
न्यायाधीशमुवाचैवं वचनं शास्त्रसम्मतम् ।।

हत्या कृता न कस्याऽपि न च हन्तुमहं क्षमः ।
अज्ञानपारवश्येन त्वयाऽहं दण्डितोऽधुना ।।

हत्याऽभियोगादेतस्मान्मुञ्च मां ज्ञानवान् भव ।
त्वादृशानेव गीतायां भगवानपि चोक्तवान् ।।

“य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।
उभौ तौ न विजानीतो नाऽयं हन्ति न हन्यते ।।”

न्याय वकील पर आश्रित

कोई शातिर चोर कभी जब न्यायालय में आया ।
मुझे बचाओ जज के आगे तेजी से चिल्लाया ।।

उसका रोना सुनकर जज ने कहा नहीं घबराओ ।
पहली बार किया है चोरी क्या यह मुझे बताओ? ।।

कहा चोर ने चोरी मैंने कई बार दुहराई ।
जिसके बदले सदा आपने मुझको सजा सुनाई ।।

मैं तो कई बार आया हूँ समझें आप कृपा कर ।
किन्तु वकील हमारा आया पहली बार यहाँ पर ।।

घर में दिन में आना

चोरी करके चोर कभी जब न्यायालय में आया ।
किया पैरवी तब वकील ने उसको मुक्त कराया ।।

धन्यवाद देकर वकील को बोला कुछ मुस्काता ।
नहीं बचाते आप अगर तो जेल चला ही जाता ।।

आकर घर मैं शीघ्र करूँगा कभी आपका दर्शन ।
लेकर के मिष्ठान्न साथ में बड़ी खुशी से श्रीमन् ।।

बातें सुनकर के वकील वह बोला थोड़ा हँसकर ।
दिन में आना, नहीं रात में आना प्यारे तस्कर! ।।

आत्मा अजर अमर है

हत्या से बचने का कोई साक्ष्य नहीं मिल पाया ।
अपराधी को मृत्यु दण्ड जज ने आदेश सुनाया ।।

मृत्युदण्ड को सुनकर भी अपराधी निर्भय बोला ।
अपनी रक्षा हेतु शास्त्र का उसने पन्ना खोला ।।

मारा नहीं किसी को मैंने आप व्यर्थ हैं शंकित ।
अज्ञानी होकर करते हैं कैसे मुझको दण्डित? ।।

मुझे दण्ड से मुक्त करें अपना अज्ञान मिटायें ।
लिखा आपके लिये कृष्ण ने गीता में बतलायें ।।

मरने और मारने वाले दोनों समझ न पाये ।
आत्मा तो है अमर कहीं भी मरे न मारा जाये ।।

विषस्य विषमौषधम्

उत्कोच-ग्रहणे कश्चिन्निगृहीतो यदा भवेत् ।
उत्कोचमेव दत्त्वाऽसौ अभियोगाद् विमुच्यते ।।

उत्कोचस्याऽभियोगस्य कुर्यात्तेनैव नाशनम् ।
पण्डितैः सत्यम् उक्तं यद् ''विषस्य विषमौषधम्'' ।।

वसुधैव कुटुम्बकम्

चौरकर्माऽभियोगस्तु यदा सिद्धोऽभवत् तदा ।
न्यायाधीशोऽभियुक्ताय कारादण्डं प्रदत्तवान् ।।

कारादण्डं समाकर्ण्य त्वभियुक्तः स निर्भयः ।
न्यायाधीशमुवाचैव वचनं शास्त्रसम्मतम् ।।

परेषां नैव वस्तूनि गृहीतानि मया प्रभो! ।
भवादृशं च मे चित्तं नाऽस्ति संकुचितं यतः ।।

''अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्'' ।।

उपयोगं करोम्यहम्

चौरकर्माऽभियोगस्य निर्णयं श्रावयन् यदा ।
न्यायाधीशोऽभियुक्तं तु प्रोवाच हर्षयन्निव ।।

प्रमाणं सबलं किञ्चित् न चात्राऽधिगतं यतः ।
स्कूटरयानचौर्येऽस्मिन् तस्मान्मुक्तोऽसि साम्प्रतम् ।।

श्रुत्वा तद्वचनं हृष्टोऽभियुक्तः स जगाद यत् ।
किं तद्धि स्कूटरं श्रीमन्! प्रयोक्तुं शक्यतेऽधुना? ।।

अहं सेवानियोजकः

न्यायाधीशो यदा चौरं रुष्टः पप्रच्छ यत्त्वया ।
कदापि कस्यचित् किञ्चिद् हितमप्यत्र साधितम्? ।।

प्रश्नमेनं समाकर्ण्य चौरोऽपि तत्क्षणं तदा ।
विनीतभावमापन्नो न्यायाधीशमुवाच यत् ।।

अस्माकं कारणादेव विभागे पुलिसस्य तु ।
बहवः पुरुषाः श्रीमन्! सेवायां निरता इति ।।

विष ही विष को मारे

लेते हुये घूस यदि कोई कहीं पकड़ में आये ।
देकर घूस तभी अपने को उससे मुक्त कराये ।।

करें घूस का नाश घूस से जीवन सदा सँवारे ।
कहा पण्डितों ने भी ऐसा 'विष ही विष को मारे' ।।

अपना और पराया

न्यायालय में किसी चोर को जज ने दण्ड सुनाया ।
उसे जेल में जाने का ऐसा आदेश बताया ।।

कारागार-दण्ड सुनकर भी नहीं हुआ वह विचलित ।
बोला न्यायाधीश महोदय! यह बिलकुल है अनुचित ।।

किसी दूसरे की कोई भी वस्तु न मैंने ली है ।
आप सदृश मेरा मन तो कुछ भी संकुचित नहीं है ।।

छोटे मन की बात यही है अपना और पराया ।
किन्तु बड़े दिल वालों के मन में संसार समाया ।।

स्कूटर वही चलाऊँ ?

चोरी का अपराध तुम्हारा सिद्ध नहीं हो पाया ।
सुनकर खुशी हुआ अपराधी मन ही मन मुस्काया ।।

बोले न्यायाधीश महोदय कोई साक्ष्य नहीं है ।
सिद्ध नहीं अपराध तुम्हारा निर्णय बहुत सही है ।।

जज की बातें सुनकर बोला हर्षित होकर तस्कर ।
क्या प्रयोग कर सकता हूँ श्रीमन्! अब वह स्कूटर ।।

नौकरी कहाँ वे पाते

कभी चोर से क्रोधित होकर जज बोला गुस्साता ।
तुमने कभी किसी का थोड़ा भी कोई हित साधा? ।।

जज की ऐसी बातें सुनकर तभी चोर वह तत्क्षण ।
बड़ी नम्रता से ऐसा तब करने लगा निवेदन ।।

बहुत लोग हैं मेरे कारण पुलिस विभाग चलाते ।
चोर नहीं होता यदि मैं नौकरी कहाँ वे पाते? ।।

सर्वव्यापक ईश्वरः

एकदा देवदत्तस्तु सश्रद्धं सस्मिताननः ।
मन्दिरे समुपागम्य पुजारिणमुवाच यत् ।।

समये पूजनस्याऽथ प्रार्थनासमयेऽपि वा ।
धूमपानमहं ब्रूहि कर्त्तुं शक्नोमि वा न वा? ।।

तस्य तत्प्रश्नमाकर्ण्य पुजारी प्रत्युवाच यत् ।
किमेवम् ईश्वरस्य त्वम् अपमानं चिकीर्षसि? ।।

देवदत्तस्तदा ब्रूते धूमपानं प्रकुर्वता ।
ईश्वर-स्मरणं कर्त्तुं शक्यते वा न वा मया? ।।

पुजारी प्राह तच्छ्रुत्वा स्मरणं प्रार्थनं प्रभोः ।
निःसन्दिग्धं क्वचित्कर्त्तुं कदाचिच्चाऽपि शक्यते ।।

सेवानिवृत्तिरस्ति किम् ?

न्यायाधीशोऽभियुक्ताय दण्डमुद्घोषयन् यदा ।
सुधारमिच्छुकस्तं च वाक्यमेवम् उवाच यत् ।।

मन्ये त्वम् अन्तिमं वारं समागच्छसि मत्पुरः ।
भविष्यत्समये नैव पुनरत्राऽऽगमिष्यसि ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वाऽभियुक्तः स जगाद यत् ।
भवत्सेवानिवृत्तिः किं सद्यः सम्पत्स्यते प्रभो! ।।

●

निःसन्देह कहीं पर

कभी कहीं श्रद्धा विवेक से देवदत्त मुस्काया ।
मन्दिर जाकर किसी पुजारी को यह प्रश्न सुनाया ।।

क्या पूजा प्रार्थना समय में कृपया आप बतायें ।
धूम्रपान कर सकता हूँ मैं यहाँ मुझे समझायें ? ।।

सुनकर के यह प्रश्न पुजारी देवदत्त से ऐसे ।
बोला तुम परमेश्वर का अपमान चाहते कैसे? ।।

देवदत्त ने कहा ठीक है दें उत्तर अब इसका ।
बीड़ी पीते हुए ध्यान कर सकता हूँ ईश्वर का? ।।

कहा पुजारी जी ने ऐसा उसकी बातें सुनकर ।
प्रभु का ध्यान कभी कर सकते निःसन्देह कहीं पर ।।

होंगे शीघ्र रिटायर

अपराधी को दण्डित करके जज ने कुछ समझाया ।
अच्छा बनने का उसको ऐसा गुरुमन्त्र सिखाया ।।

आशा है अन्तिम होगा यह मिलन तुम्हारा मुझसे ।
आगे नहीं दिखाई दोगे सदा रहोगे सुख से ।।

जज की बातें सुनकर बोला अपराधी मुस्काकर ।
लगता है बस इसी साल ही होंगे आप रिटायर ।।

●

शैक्षणिक-विषयः

महतां पदचिन्हं क्व ?

कश्चिदध्यापकस्तावत् कक्षायामेवम् उक्तवान् ।
महतां पदचिह्नेषु यातव्यं बालकैः सदा ।।

अध्यापकवचः श्रुत्वा कश्चिच्छात्र उवाच यत् ।
प्राप्स्यन्ते पदचिह्नानि महतां साम्प्रतं कुतः? ।।

वायुयानेषु गच्छन्ति कारयानेषु चाऽपि ते ।
अतस्तत्पदचिह्नानि नाऽधिगम्यानि वै क्वचित् ।।

तदैवाऽङ्काः प्रदास्यन्ते

अध्यापकस्तु कक्षायां छात्रान् एवमुवाच यत् ।
क्रिकेट-खेल सन्दर्भे निबन्धं लिखताऽधुना ।।

कश्चिच्छात्रोऽलिखत्तत्र महावृष्टेस्तु कारणात् ।
न प्रारब्धा क्रिकेटस्य क्रीडा चाऽद्य कथञ्चन ।।

तस्य लेखम्पठित्वा तु गुरुस्तत्र लिलेख यत् ।
यदा प्रारप्स्यते क्रीडा तदैवाऽङ्कोऽपि दास्यते ।।

बिन्दुस्तु खलनायिका

प्रकुर्वन् गणिते प्रश्नं गुरुश्छात्रमुवाच यत् ।
को बिन्दु-रेखयोर्मध्ये भेद इति तु मां वद? ।।

गुरोस्तत्प्रश्नमाकर्ण्य छात्रस्तं प्रत्युवाच यत् ।
रेखा तु नायिका ख्याता बिन्दुस्तु खलनायिका ।।

शैक्षणिक-विषय

पदचिह्न नहीं है मिलते

अध्यापक जी बोले छात्रों! मुझे यही है कहना।
सदा बड़ों के पदचिह्नों पर तुम्हें चाहिये चलना ॥

ऐसा सुनकर किसी छात्र ने कहा प्रभो! बतलायें।
महापुरुष के पदचिह्नों को कहाँ हम सभी पायें ॥

वायुयान में सदा कार में महापुरुष वे चलते।
इसीलिये पदचिह्न हमें उनके न दिखाई पड़ते ॥

तभी लिखूँगा नम्बर

कक्षा में अध्यापक बोले छात्रों को समझाकर।
लिखना है निबन्ध सबको आज क्रिकेट-क्रीडा पर ॥

किसी छात्र ने लिखा महोदय आज वृष्टि के कारण।
खेल नहीं हो पायेगा ऐसा निश्चित है श्रीमन् ॥

अध्यापक ने लिखा तभी यह लेख छात्र का पढ़कर।
जब होगा प्रारम्भ खेल का तब ही दूँगा नम्बर ॥

रेखा और बिन्दु का भेद

कभी गणित के अध्यापक ने कहा वत्स! बतलाओ।
रेखा और बिन्दु में अन्तर क्या होता समझाओ? ॥

कहा छात्र ने रेखा है नायिका सभी यह जानें।
खलनायिका बिन्दु होती है सभी लोग पहचानें ॥

गुरोर्नेत्रेषु विकृतिः

विद्यालये तु कक्षायां छात्रः कश्चिदथैकदा ।
नेत्रचिकित्सकेनैव सार्धमागत्य सस्मितः ।।

प्राध्यापकं स्वकीयं स कुर्वन्निङ्गितमाह यत् ।
नेत्राणां कृपयैतेषां विदधातु परीक्षणम् ।।

छात्रस्य वचनं श्रुत्वा शिक्षको विस्मितोऽब्रवीत् ।
अरे! किं भाषसे? नेत्रे मम स्वस्थे तु सर्वथा ।।

गुरोस्तद्वचनं श्रुत्वा छात्रः स प्रत्युवाच यत् ।
गुरो! नेत्रेष्ववश्यं स्यात् कश्चिद्दोषो महान् यतः ।।

कदाचिद् गर्दभश्चाऽहम् उलूकश्च कदाचन ।
कदाचित् उष्ट्रकश्चाऽहं प्रतीये भवते प्रभो! ।।

कृतो नैव परिश्रमः

परीक्षायामनुत्तीर्णं दुःखितम्पुत्रमेकदा ।
विलोक्य जनकस्तं च सान्त्वयन् एवमब्रवीत् ।।

मा कार्षीः दुखमेवं त्वं मन्ये भाग्ये तव प्रिय! ।
लिखितं यत् तदेवाऽभूत् तत्र किं परिदेवनम्? ।।

तातस्य वचनं श्रुत्वा पुत्रो जनकमाह यत् ।
साधु जातं तदा सर्वमिति मन्ये त्वहं यतः ।।

यद्यहं पठने तावद् अकरिष्यं परिश्रमम् ।
सर्वः परिश्रमो व्यर्थमभविष्यन्न संशयः ।।

वैद्यराज ! नमस्तुभ्यम्

आयुर्विज्ञान-संस्थाने सूचनापट्टके यदा ।
प्राचार्यस्तत्र छात्राणां ज्ञानार्थम् उदलेखयत् ।।

महामहिमशाली मां राष्ट्रपतिमहोदयः ।
नियुक्तमकरोदद्य पदे निजचिकित्सके ।।

अन्येद्युस्तत्र चाऽधस्तात् कश्चिच्छात्रो लिलेख यत् ।
प्रभो! दीर्घायुषं कृत्वा राष्ट्राध्यक्षं तु पाहि नः ।।

कर दें नेत्र-परीक्षण

आया कक्षा में छात्र साथ में लेकर नेत्र परीक्षक ।
उसे देखते ही कक्षा में दंग हुए प्राध्यापक ।।

इनकी ओर इशारा करके कहा छात्र ने तत्क्षण ।
कृपया डाक्टर साहब करिये इनका नेत्र-परीक्षण ।।

बातें सुनकर शिक्षक को आश्चर्य हुआ तब भारी ।
क्या बकते हो आँखे दोनों बिलकुल सही हमारी ।।

अध्यापक की बातें सुनकर कहा छात्र ने ऐसे ।
फिर बतलायें आप महोदय ऐसा संभव कैसे? ।।

कभी मुझे गदहा कहते हैं उल्लू भी कह देते ।
कभी ऊँट कहते हैं गुरुवर! क्या हम वैसे दिखते? ।।

भाग्य लिखा ही होता

कोई छात्र परीक्षा में हो गया फेल घबराया ।
दुःखी छात्र को उसके पापा ने सान्त्वना बँधाया ।।

बोले बेटा नहीं दुःखी हो भाग्य लिखा जो होता ।
इसमें तेरा दोष नहीं है फिर कैसे तू रोता? ।।

बातें सुनते ही पापा की बेटा तब मुस्काया ।
ऐसा है तो सब कुछ अच्छा मुझे समझ में आया ।।

व्यर्थ परिश्रम होता यदि मैं पढ़ता कष्ट उठाता ।
बिना भाग्य के यहाँ सफलता मैं कैसे पा जाता? ।।

राष्ट्रपति की सुरक्षा

किसी चिकित्सालय के बाहर लगे सूचना पट पर ।
लिखवाया प्राचार्य महोदय ने ऐसा खुश होकर ।।

मुझे बनाया गया राष्ट्रपति जी का मुख्य चिकित्सक ।
मैंने भी स्वीकार किया है होकर के नतमस्तक ।।

किसी छात्र ने उसके नीचे लिखा दूसरे दिन ही ।
“प्रभो! उन्हें दीर्घायु बनायें रक्षा करें सदा ही” ।।

कथं वर्णयितु क्षमः

परीक्षायां तु कस्याञ्चित् प्रश्न एष समागतः ।
कश्मीरस्य प्रदेशस्य सौन्दर्यं वर्ण्यताम् इति ।।

उत्तरपुस्तिकायां च छात्रेण लिखितं त्विदम् ।
सौन्दर्यं वर्णनाऽतीतं कश्मीरस्याऽस्ति सर्वथा ।।

प्रतिप्रश्नं कियद् धनम् ?

समाप्य पाठमाचार्यश्छात्रान् एवम् उवाच यत् ।
शङ्का स्यादथवा प्रश्नस्तत्सर्वं प्रष्टुमर्हथ ।।

गुरोस्तद्वचनं श्रुत्वा सांसदस्य सुतस्तदा ।
अभिवाद्य गुरुं तत्र कक्षायामेवम् अब्रवीत् ।।

प्रश्नास्तु बहवः सन्ति ज्ञातुमिच्छाम्यहं परम् ।
प्राप्तव्यं वर्त्तते चाऽत्र प्रतिप्रश्नं कियद् धनम्? ।।

प्रारभ्य चोत्तमजनाः

विद्यालये भवति शान्तियुता परीक्षा,
प्रारब्धवान् अनुचितं ननु कर्म चैकः ।
दृष्ट्वा तु छात्रमथ कक्षनिरीक्षकश्च,
ऊचे यदा किमपि तं प्रतिरोद्धुकामः ।।
छात्रो जगाद् सहसा कुरु नैव विघ्नम्,
त्यक्ष्यामि नाऽनुकरणं च गुरो! यतोहि ।
''विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः,
प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति'' ।।

सुकृतिनः परिपालयन्ति

मद्यं च मांसमथ दुर्वचनं तथैव,
त्याज्यं त्वयेति गुरुणा बहुधोपदिष्टः ।
शिष्यो ब्रवीति न हि शक्यमिदं यतो हि,
''अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति'' ।।

कश्मीरी सुन्दरता

किसी परीक्षा में आया था ऐसा प्रश्न विलक्षण ।
करें सभी कश्मीर प्रान्त की सुन्दरता का वर्णन ।।

किसी छात्र ने लिखा-नहीं उसका वर्णन हो सकता ।
वर्णन से है परे हमारी काश्मीर सुन्दरता ।।

कितना पैसा पाऊँ ?

पाठ पढ़ाकर अध्यापक जी यूँ बोले छात्रों से ।
यदि कुछ यहाँ पूछना हो तो पूछो निश्चित हमसे ।।

सुनकर बातें तभी गुरू की सांसद का सुत बोला ।
गुरु को सम्बोधित कर कक्षा में यूँ अपना मुँह खोला ।।

प्रश्न बहुत हैं मेरे मन पर यही जानना चाहूँ ।
प्रश्न पूछने का कक्षा में कितना पैसा पाऊँ? ।।

वे उत्तम कहलाते

विद्यालय में बड़ी शान्ति से होने लगी परीक्षा ।
किसी छात्र के मन में जागी तभी नकल की इच्छा ।।

उसने अनुचित कार्य किया प्रारम्भ वहाँ जैसे ही ।
देखा कक्ष-निरीक्षक ने रोका उसको वैसे ही ।।

बोला छात्र न विघ्न कीजिये कार्य करूँगा पूरा ।
जो प्रारम्भ किया है क्यों फिर छोड़ूँ उसे अधूरा ।।

आप सभी ने स्वयं पढ़ाया वे 'उत्तम' कहलाते ।
कर प्रारम्भ कार्य जो पीछे कभी नहीं हट जाते ।।

छोड़ते नहीं सज्जन है

कभी शिष्य से कहा गुरू ने मेरा मानो कहना ।
तुम्हें माँस-मदिरा कटुता का परित्याग है करना ।।

बोला शिष्य नहीं यह संभव इसमें शास्त्र-वचन है ।
करके अङ्गीकार नहीं छोड़ते कभी सज्जन हैं ।।

न कोऽप्यधिगतो मया

साहित्यिक्यां हि चर्चा लेखकः कश्चिदेकदा ।
साहित्यकारम् अन्यं तु वाक्यमेवमुवाच यत् ।।

परिचर्चा वृथा चेयं नीरसा मत्कृते परम् ।
त्वया समं तु वार्त्तायाम् आनन्दः कश्चिदागतः ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा लेखकस्य यशस्विनः।
असौ साहित्यकारस्तु लेखकम्प्रत्युवाच यत् ।।

भवांस्तु मम सामीप्यादानन्दं प्राप्तवान् क्वचित् ।
परं कश्चिन्मया प्राप्तो नाऽनन्दाय तथा नरः ।।

स्वयं श्रोतुं समुत्सुकः

सुवक्तृत्वकलायाश्च प्रशंसां व्याहरन् बहु ।
सभाध्यक्षस्तु श्रीमन्तं वक्तारमाह्वयद् यदा ।।

वक्ता महोदयाश्चाऽसौ सभाऽध्यक्षकृतां तदा ।
स्वकीयाऽतिप्रशंसां ताम् आलक्ष्य सस्मिताऽऽननः ।।

स्वकीयभाषणाऽऽरम्भे सभाध्यक्षमहोदयम् ।
धन्यवादं तु विज्ञाप्य श्रोतॄन् सम्बोध्य चाऽऽह यत् ।।

मम भाषणशैल्यास्तु प्रशंसा याऽत्र वर्णिता ।
तच्छ्रुत्वाऽहं स्वयं नैजं भाषणं श्रोतुमुत्सुकः ।।

दिवा ब्रूते निशाटनः

षोडशीं सुन्दरीं दृष्ट्वा छात्रः सव्यंग्यम् उक्तवान् ।
अहो! मध्याह्नकालेऽपि चन्द्रः समुदितः कथम्? ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा षोडशी प्रत्युवाच यत् ।
उलूकोऽयं दिनेऽप्यद्य कथं शब्दायते प्रभो! ।।

सारा समय गँवाया

साहित्यिक परिचर्चा में कोई वर्चस्व दिखाता ।
किसी दूसरे लेखक से बोला अधिकार जमाता ।।

परिचर्चा बेकार लगी वक्तव्य व्यर्थ थे सारे ।
वार्ता में आनन्द मिला बस केवल साथ तुम्हारे ।।

परम यशस्वी लेखक की ये हार्दिक बातें सुनकर ।
कहा दूसरे लेखक ने उससे ऐसा कुछ हँसकर ।।

किसी तरह से तुमको तो आनन्द यहाँ मिल पाया ।
किन्तु व्यर्थ में आ कर मैंने सारा समय गँवाया ।।

इच्छा हुई हमारी

परम श्रेष्ठ वक्तृत्व कला में आदि आदि सम्बोधन ।
कह जब किया सभापति जी ने वक्ता का आवाहन ।।

सभाध्यक्ष के सम्बोधन से वक्ता हुए प्रभावित ।
तन रोमाञ्चित हुआ और फिर मन भी हुआ प्रफुल्लित ।।

सभाध्यक्ष को धन्यवाद से शुरू किया संभाषण ।
होकर भाव विभोर कहा तब हे प्यारे श्रोतागण! ।।

मेरे भाषण शैली की जो हुई प्रशंसा भारी ।
अपने भाषण को सुनने की इच्छा हुई हमारी ।।

दिन में उल्लू बोला

देख सुन्दरी कन्या कोई छात्र तभी मुस्काया ।
बोला आज दोपहर को ही चाँद कहाँ से आया? ।।

बोली सुनकर तभी सुन्दरी कैसा वक्त यहाँ है ।
अरे आज दिन में ही कैसे उल्लू बोल रहा है? ।।

वने सीता कथं गता ?

एकदा देवदत्तस्तु कक्षायां पाठयन् यदा ।
छात्रान् उपस्थितांस्तत्र प्रश्नमेवम् उवाच यत् ।।

त्यक्त्वा राजसुखं सर्वं नानाभोग्य-समन्वितम् ।
रामेण सह सीताऽपि वद कस्माद् वनं गता? ।।

गुरोस्तत्प्रश्नमाकर्ण्य स्तब्धे विद्यार्थि-मण्डले ।
कश्चित् छात्रः समुत्थाय तत्रैवम् उत्तरं ददौ ।।

एकयैव गृहे श्वश्र्वा निर्वाहो दुष्करो यदा ।
त्रिश्वश्रूणां भयादेव मन्ये सीता पलायिता ।।

यथासंख्यं यथाक्रमम्

पूर्वं साधारणं पत्रं तत्पश्चात् तारपत्रकम् ।
प्राप्याऽऽश्चर्यं न कर्त्तव्यं श्रूयतामत्र कारणम् ।।

पाणिनेरस्ति निर्देशो यथासंख्यं यथाक्रमम् ।
डाक-तार विभागस्य प्रवृत्तिरपि वै तथा ।।

प्रमाणं पाणिनिं कृत्वा कार्यमेष करोत्यतः ।
पूर्वमायान्ति पत्राणि तत्पश्चात् तारपत्रकम् ।।

वर्त्तते हानिकारकम्

व्याकरणस्य कक्षायां पृष्टवान् गुरुरेकदा ।
''धनं ददामि विप्राय'' कारकम् इह किं भवेत्? ।।

तस्य प्रश्नं समाकर्ण्य शिष्यः कश्चिदुवाच यत् ।
गुरो! प्रतीयते वाक्ये कारकं हानिकारकम् ।।

●

सीता भागी वन में

देवदत्त ने कक्षा में छात्रों को पाठ पढ़ाया ।
कहा बताओ बच्चों! क्या यह तुम्हें समझ में आया? ।।

बोलो सारे सुख को छोड़ा क्यों सीता ने पल में ।
गयी राम के साथ बताओ कैसे वह जंगल में? ।।

सभी छात्र थे मौन नहीं कोई उत्तर दे पाया ।
एक छात्र ने कहा महोदय! मुझे समझ में आया ।।

एक सास का साथ निभाना दुष्कर जब जीवन में ।
तीन सास को देख तभी तो सीता भागी वन में ।।

पाणिनि का निर्देश यही

आती पहले चिट्ठी उसके बाद तार आता क्यों? ।
उसके पीछे क्या रहस्य यह समझ आ गया मुझको ।।

पाणिनि मुनि के निर्देशों पर डाक तार चलता है ।
इस विभाग में ऋषि के वचनों का पालन होता है ।।

यथा-संख्या निर्देश यहाँ तो पहले डाक पहुँचती ।
उसके बार तार का नम्बर अष्टाध्यायी कहती ।।

कारक यहाँ हानिकारक है

कक्षा में व्याकरण पढ़ाते पूछा अध्यापक ने ।
"ब्राह्मण को धन देता हूँ मैं" कारक क्या है इसमें? ।।

गुरु के प्रश्नों को सुनकर कुछ सोच शिष्य कहता है ।
कारक यहाँ हानिकारक ही मुझे दीख पड़ता है ।।

●

अपराध-विषयः

वस्त्राणि केवलं पृथक्

चौर-पुलिसयोर्मध्ये को भेद इति मां वद? ।
प्रश्नमेनं समाकर्ण्य देवदत्तो ब्रवीति यत् ।।

सामान्यं वर्त्तते सर्वम् एकैव भिन्नताऽस्ति यत् ।
उभयोः परिधानानि भवन्तीह पृथक् पृथक् ।।

चलचित्रं पुरा दृष्टम्

पुलिसाऽधीक्षकस्तावत् निरीक्षकमुवाच यत् ।
चौराऽनुगमनं कृत्वा निगृहीतः कथं न सः? ।।

निरीक्षकस्तदा प्राहाऽनुगमनं कृतवानहम् ।
परन्तु स प्रविष्टोऽभूत् चलचित्रालयं तदा ।।

अथ तं निग्रहीतुं च ब्रूहि त्वमपि तत्क्षणम् ।
चलचित्रगृहे तस्मिन् कथं नैव प्रविष्टवान्? ।।

पुलिसाऽधीक्षके तस्मिन्नेवं पृष्टेऽथ सत्वरम् ।
निरीक्षकस्तदा तत्र प्राह गंभीरया गिरा ।।

चलचित्रमहं तत्तु बहुधा दृष्टवान् प्रभो! ।
अतएव प्रविष्टोऽहं नैव चित्रालये तदा ।।

एषोऽस्ति नः परिश्रमः

एकदा देवदत्तस्य गृहे चौराः समागताः ।
रज्जुभिर्बन्धनं कृत्वा पृच्छन्ति क्वाऽस्ति ते धनम्? ।।

सुसन्त्रस्तस्तदा भीतो देवदत्तस्तदैव सः ।
किं कर्त्तव्यविमूढात्मा चौरांस्तान् प्रत्युवाच यत् ।।

नीयतां सकलं वित्तं यत्किमप्यत्र वर्तते ।
मारयध्वं न मां किन्तु पीडयध्वं न वा तथा ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा चौरास्ते सहसा तदा ।
किञ्चिद् विहस्य सक्षुब्धा देवदत्तं ब्रुवन्ति यत् ।।

कथमेतद् भवेत्? नाऽयं सम्भवो वर्त्तते यतः ।
परिश्रमं विना नैव गृहणीमः कस्यचिद् धनम् ।।

अपराध-विषय

दोनों का पहनावा

कहा किसी ने पुलिस चोर में क्या होता है अन्तर? ।
देवदत्त ने कहा महोदय! सीधा इसका उत्तर ।।

दोनों एक समान यहाँ पर होते मेरा दावा ।
सिर्फ अलग होता है भाई दोनों का पहनावा ।।

नहीं सिनेमाघर में

पुलिस अधीक्षक ने क्रोधित हो इंस्पेक्टर से पूछा ।
भाग रहा था चोर तभी क्यों किया न तुमने पीछा? ।।

इन्स्पेक्टर ने कहा-किया पीछा लेकिन पल भर में ।
तेजी से भागता हुआ वह घुसा सिनेमाघर में ।।

बोला पुलिस अधीक्षक झूठी बातें नहीं बनाओ ।
तुम क्यों नहीं सिनेमाघर में घुसे साफ बतलाओ? ।।

पुलिस अधीक्षक के ऐसा कहने पर वह बोला ।
नहीं सिनेमाघर में घुसने का रहस्य यह खोला ।।

कई बार देखा है मैंने फिल्म लगी जो उसमें ।
इसीलिये मैं नही घुसा था तभी सिनेमाघर में ।।

बिन श्रम के ना खाता

देवदत्त के घर चोरों ने अच्छा मौका साधा ।
आते ही रस्सी से कसकर देवदत्त को बाँधा ।।

बोले माल कहाँ बतलाओ देवदत्त घबराया ।
किंकर्तव्यविमूढ़ भाव से यह सन्देश सुनाया ।।

जो कुछ भी है यहाँ महोदय आप सभी ले जायें ।
मारे नहीं मुझे कोई भी कष्ट नहीं पहुँचायें ।।

देवदत्त की ऐसी करुणामयी प्रार्थना सुनकर ।
ऐसा बोले चोर सभी तब बड़े क्रोध से हँसकर ।।

यह कैसे संभव हो सकता सत्य तुम्हें बतलायें ।
बिना परिश्रम के कैसे हम धन सारा ले जायें? ।।

शेषं ते प्रतिवेशिनाम्

गृहस्वामी यदा चौरं निशि संलक्ष्य चाऽऽह यत् ।
त्यक्त्वा सर्वाणि वस्तूनि पलायस्व गृहाद् इतः ।।

तच्छ्रुत्वा चौर ऊचे यत् त्यजेयं सकलं कथम्? ।
तव त्रीण्येव वस्तूनि शेषं ते प्रतिवेशिनाम् ।।

नैवाऽवरोधकं यन्त्रम्

एकदा पुलिसः कश्चित् मोटरयानचालकम् ।
सायं प्रकाशहीनं तद् यानं दृष्ट्वा तमाह यत् ।।

प्रकाशस्य व्यवस्था तु नास्ति यानमुखे तव ।
अत एवाऽपराधी त्वं यानं रुन्द्ध्यभियोजितः ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा यानचालक आह यत् ।
यानं न शक्यते रोद्धुं कृपया क्षम्यतां यतः ।।

मम मोटरयानेऽस्मिन् दुःखमेतद् हि साम्प्रतम् ।
अवरोधकयन्त्रस्य व्यवस्थाऽपि न वर्तते ।।

घोटकः किं पठिष्यति ?

थाना-स्थानमुपागम्य तांगायानस्य चालकः ।
उवाच यन्न जाने क्व विलुप्तस्तस्य घोटकः ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा थानाऽध्यक्षो ब्रवीति यत् ।
त्वं समाचारपत्रेषु विज्ञप्तिं कुरुषे न किम्? ।।

तस्योपदेशमाकर्ण्य तांगाचालक आह यत् ।
निरक्षरः परं श्रीमन्! वर्त्तते मे तुरङ्गमः ।।

अवशिष्टं पुरातनम्

स्वामी भृत्यम् उवाचेदं किं ते चौरा गृहात् पुनः ।
मम सर्वाणि वस्तूनि नीत्वा रात्रौ पलायिताः? ।।

स्वामिनो वचनं श्रुत्वा भृत्यः प्राह नताऽऽननः ।
पुरातनानि वस्त्राणि स्वामिन्! त्यक्तानि तैः परम् ।।

बाकी पड़ोसियों की

घुसा चोर तो जाग गया घर का मालिक गुर्राया ।
बोला सारा माल छोड़कर भागो तुम धमकाया ।।

कहा चोर ने कैसे छोड़ूँ सारी चीजें क्यों जी? ।
तीन वस्तुयें यहाँ तुम्हारी बाकी पड़ोसियों की ।।

निश्चित ब्रेक लगाता

बिना प्रकाश व्यवस्था के जब चलती बस को देखा ।
दौड़ा तभी सिपाही कोई थी प्रसन्नता रेखा ।।

बोला प्रकाश के बिना चलाते हो तुम गाड़ी कैसे? ।
रोको बस अपराध तुम्हारा बच न सकोगे मुझसे ।।

बस चालक ने उसकी बातें सुनकर किया निवेदन ।
नहीं रोक सकता हूँ गाड़ी क्षमा करेंगे श्रीमन् ।।

मेरी बस में ब्रेक नहीं है सच कहता हूँ भ्राता ।
होता तो रोकने के लिए निश्चित ब्रेक लगाता ।।

पढ़ा नहीं है घोड़ा

कोई ताँगे-वाला थाने आया दौड़ा-दौड़ा ।
और कहा हे साहब! मेरा कहीं खो गया घोड़ा ।।

उसकी बातें सुनकर थानेदार उसे समझाया? ।
विज्ञापन दे दो पेपर में यह उपाय बतलाया ।।

ऐसी बातें सुन कर के उसने तब किया निवेदन ।
अपढ़ किन्तु मेरा घोड़ा क्या पढ़ सकता विज्ञापन? ।।

फटे पुराने कपड़े

स्वामी ने नौकर से पूछा घर से चोर हमारे, ।
सभी वस्तुयें लेकर क्या वे रातो-रात सिधारे? ।।

नौकर बोला स्वामी सारे चोर बड़े थे तगड़े ।
सभी वस्तु ले गये छोड़कर फटे पुराने कपड़े ।।

सदाचारे प्रमाणं तत्

न्यायाधीशो यदाऽपृच्छद् अभियुक्तमिदं हि यत् ।
किं निजसच्चरित्रस्य प्रमाणं दातुमर्हसि? ।।

तच्छ्रुत्वा वचनं तस्याऽभियुक्तो निजगाद यत् ।
आम्, श्रीमन्! तत्प्रमाणेऽयं थानाध्यक्षस्तु वर्त्तते ।।

तस्य तद्वाचमाकर्ण्य थानाध्यक्षो ब्रवीति यत् ।
नो श्रीमन्! नैव जानेऽहमभियुक्तमिमं क्वचित् ।।

थानाध्यक्षवचः श्रुत्वाऽभियुक्तः पुनरुक्तवान् ।
विनीतभावपन्नो न्यायाधीशमिदं वचः ।।

अहं हि दशभिर्वर्षै र्वसामि नगरे त्विह ।
थानाध्यक्षो न मां वेत्ति प्रमाणं किं ततोऽधिकम्? ।।

निःशुल्कं शिक्ष्यते कथम् ?

थानाऽध्यक्षो यदा चौरं पृष्टवान् यत् कथं त्वया ।
सुनिबद्धं कपाटं तत् शीघ्रम् उद्घाटितं निशि? ।।

तस्य तत्प्रश्नमाकर्ण्य चौरोऽसौ प्रत्युवाच यत् ।
प्रयासाऽभ्यास-संयुक्ता गुरुसेवाभिरर्जिता ।।

इयं फलवती विद्या मया यत्नात् परिष्कृता ।
कथं सा भवते स्वामिन्! निःशुल्कं शिक्षयिष्यते? ।।

श्रीमान् श्यालो महोदयः

अभियुक्तो यदा कश्चित् कारागारं प्रविष्टवान् ।
कारागारस्य चाऽध्यक्षस्तं विहस्य जगाद् यत् ।।

मन्ये त्वम्प्रथमं वारम् आगतः श्वशुरालये ।
स्वागतं भद्र! ते नित्यं यथेच्छं वस साम्प्रतम् ।।

काराऽध्यक्षस्य तद्वाचं परिहासप्रियस्य वै ।
श्रुत्वा चौरोऽपि तत्रैवं प्रत्युवाच स्मिताननः ।।

इतः पूर्वमहं प्राप्तो बहुधा श्वशुरालयम् ।
परन्तु प्रथमं वारं दृष्टः श्यालो महोदयः ।।

●

सबसे बड़ा प्रमाण यही

पूछा न्यायाधीश महोदय ने जब अभियोगी से ।
अपनी सच्चरित्रता का प्रमाण दे सकते कैसे? ।।

थानाध्यक्ष महोदय को तब पास खड़े वह देखा ।
बोला ये इसमें प्रमाण हैं शुभ है जीवन-रेखा ।।

उसकी बातें सुनकर थानाध्यक्ष महोदय बोले ।
नहीं जानता इसे कभी मैं इसको कैसे तौलें? ।।

उनकी बातें सुनकर वह अभियुक्त तुरत फिर बोला ।
हो विनम्र उस जज के सम्मुख अपने मुँह को खोला ।।

दस वर्षों से इसी शहर में रहता हूँ क्या कम है ।
पुलिस नहीं जानती मुझे यह सच्चरित्रता का दम है ।।

उसको मुफ्त लुटायें ?

कभी किसी दिन थाना का अध्यक्ष चोर से बोला ।
कैसे आधी रात शीघ्र तुमने दरवाजा खोला? ।।

ऐसी बातें सुनकर बोला तस्कर होकर निश्चल ।
सत्प्रयास अभ्यास और यह है गुरु-सेवा का फल ।।

ऐसी सफल कला की विद्या बड़े यत्न से पायें ।
फिर कैसे यह आप बतायें उसको मुफ्त लुटायें? ।।

साले साहब

पकड़ गया जब चोर जेल में वह जैसे ही आया ।
अधिकारी ने हँस करके उसको तब यही सुनाया ।।

लगता है ससुराल यहाँ तुम पहली बार पधारे ।
स्वागत है तुम जब तक चाहो रहो शौक से प्यारे! ।।

अधिकारी की बातें सुनकर चोर तभी मुस्काया ।
उसको अपनी प्रतिभा का ऐसा आभास कराया ।।

आया हूँ मैं कई बार ससुराल यहाँ पहले भी ।
किन्तु भाग्य से मुझको पहली बार मिले साले भी ।।

●

पिता-पुत्रादिविषयः

योत्स्यामि तदनन्तरम्

पिता पुत्रमुवाचेदं सदा त्वं युध्यसे पुरा ।
क्षमां च याचसे पश्चात् नेदं श्रेयस्करं मतम् ।।

तच्छ्रुत्वा सप्तवर्षीयः पुत्रः स तातमाह यत् ।
अस्तु पूर्वं क्षमायाच्ञा युद्धं च तदनन्तरम् ।।

अन्त्येष्ट्यां प्रस्थितस्तव

कार्यालये समागत्य वृद्धः कश्चिदथैकदा ।
जिज्ञासुः पृष्टवान् एवं तत्रस्थम् अधिकारिणम् ।।

मत्पौत्रो देवदत्ताख्य इह कार्यरतोऽस्ति यः ।
तं सम्मेलितुमिच्छामि तन्मां निर्दिशतां भवान् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वाऽधिकारी विस्मिताऽऽननः ।
मन्दं विहस्य तं वृद्धं वचनं प्रत्युवाच यत् ।।

स्वस्य पितामहस्यैव दुःखम् अन्त्येष्टिकर्मणि ।
नीत्वाऽवकाशमद्यैव देवदत्तो गृहं गतः ।।

ज्येष्ठानाम् उपयोगिता

एकदा बालकः कश्चित् सखायम् एवमाह यत् ।
ज्येष्ठा अपि निमन्त्र्यन्ते कथं जन्मोत्सवे हि नः? ।।

तस्य तत्प्रश्नमाकर्ण्य सखा किंचिद्विचारयन् ।
मन्दं मन्दं विहस्यैवं मित्रं स प्रत्युवाच यत् ।।

उपहारा महामूल्या ज्येष्ठा एव हि नः सदा ।
प्रदातुं शक्नुवन्त्यत्र तस्मात्तेऽपि निमन्त्रिताः ।।

पिता-पुत्रादि विषय

क्षमा याचना पहले

कहा पिता ने बच्चे से तू हरदम लड़ता रहता।
और बाद में क्षमा माँगता मुझे न अच्छा लगता।।

सात वर्ष का बच्चा बोला बात समझ में आई।
पहले क्षमा याचना करके फिर मैं करूँ लड़ाई।।

गए आपकी अन्त्येष्टि में

कभी कहीं से कोई बूढ़ा कार्यालय में आया।
जिज्ञासा से अधिकारी को ऐसा प्रश्न सुनाया।।

पौत्र हमरा देवदत्त इस आफिस में ही रहता।
कृपया मुझे बतायें श्रीमन् क्या उससे मिल सकता? ।।

अधिकारी आश्चर्यचकित हो बोला ऐसा सुनकर।
देवदत्त तो चले गये हैं यहाँ नहीं है प्रियवर।।

कहा उन्होंने बाबा की अन्त्येष्टि-क्रिया में जाना।
हुये आप से थोड़ा पहले घर के लिये रवाना।।

बड़े बुलाये जाते

बोला कोई बच्चा अपने साथी को समझाते।
क्यों बच्चों के जन्म दिवस पर बड़े बुलाये जाते? ।।

उसकी बातें सुनकर बोला साथी कुछ मुस्काता।
बड़े बुलाये जाते हैं क्यों मुझे समझ में आता।।

बड़े कीमती उपहारों को बड़े लोग ही लायें।
इसीलिए ही यहाँ बड़ों को सारे लोग बुलायें।।

पुत्रवद् वर्त्तते भवान्

एकदा देवदत्तस्य तनयस्तातम् आह यत् ।
विवाहाऽनन्तरं किं मे पुत्रवद् भविता भवान्? ।।

पुत्रस्य वचनं श्रुत्वा देवदत्तः सुविस्मितः ।
पृष्टवान् यदहं तावत् पुत्रकल्पः कथं तव? ।।

पितुः शङ्कां समाकर्ण्य सूनुरस्य ब्रवीति यत् ।
भवांस्तु शास्त्रमर्मज्ञो नीतिवाक्य-समर्थकः ।।

न जानीते किमेतद् यद् विवाहाऽनन्तरं पितः! ।
भवत्कृते तु भार्या मे परदारा स्मृता भवेत् ।।

''मातृवत् परदारेषु'' नीतिशास्त्रेषु यद्वचः ।
ततस्तु पुत्रवत् किन्न वर्त्तते मत्कृते भवान्? ।।

भवान् कस्मै प्रयच्छति ?

एकदा देवदत्तस्तु दशवर्षीयम् आत्मजम् ।
पृष्टवान् यद् यदा ज्येष्ठो भूत्वा प्राप्य निजोजनम् ।।

वेतनं चैव मासान्ते प्राप्स्यते तद् धनं तदा ।
पत्न्यै दास्यसि वा ब्रूहि जनन्यै वा प्रदास्यसि? ।।

तच्छ्रुत्वा तस्य पुत्रस्तु पितरं प्रत्युवाच यत् ।
किं भवान् वेतनं स्वीयं पितामह्यै प्रयच्छति? ।।

परदादा के नाते

बेटा बोला देवदत्त से मैं हूँ पुत्र तुम्हारा ।
पुत्र बनेंगे किन्तु आप जब होगा ब्याह हमारा ।।

देवदत्त आश्चर्यचकित हो गया सुना जब ऐसे ।
बोला पुत्र बनूँगा मैं तुम बाप बनोगे कैसे? ।।

उनकी शंका सुनकर बोला उन्हें पुत्र समझाता ।
पढ़े लिखे हैं आप पिता जी नीतिशास्त्र के ज्ञाता ।।

किन्तु जानते नहीं आप जब होगा ब्याह हमारा ।
तभी आप के लिये हमारी पत्नी होगी परदारा ।।

परदारा माँ के समान होती है शास्त्र बताते ।
बाप बनूँगा तभी आपका परदारा के नाते ।।

पूरा वेतन पत्नी को

अपने दशवर्षीय पुत्र से देवदत्त ने हँसकर ।
पूछा पुत्र बताओ होकर बड़े बनोगे अफसर ।।

माह पूर्ण होने पर बोलो वेतन जब पाओगे ।
पूरा वेतन पत्नी को या माता जी को दोगे ? ।।

ऐसी बातें सुनकर के बच्चे ने किया निवेदन ।
दादी अम्मा को क्या देते बोलें अपना वेतन? ।।

माता मे बहु भाषते

एकदा दशवर्षीयः पुत्रो जनकमाह यत् ।
विद्यालये भवत्यद्य भाषणे प्रतियोगिता ।।

अत एव भवानद्य सुन्दरं लघु भाषणम् ।
लिखित्वा कृपया मह्यं भाषणार्थं प्रयच्छतु ।।

तस्य तद्वाक्यमाकर्ण्य पिता पुत्रमुवाच यत् ।
तदर्थं मातरं ब्रूहि भाषणे निपुणाऽस्ति सा ।।

तच्छुत्वा पुत्र ऊचे यत् नहि घण्टाद्वयात्मकम् ।
भाषणम् इष्यते मह्यं किन्तु पञ्चकलात्मकम् ।।

भवते रासभस्त्वहम्

एकदा देवदत्तस्य जनकस्तम् उवाच यत् ।
मया तु कथितं यत्त्वं गर्दभद्वयम् आनय ।।

आनीतवान् कथं चैकमेव त्वं गर्दभं परम् ।
इत्यहं ज्ञातुमिच्छामि कारणं ब्रूहि तस्य माम् ।।

पितुस्तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्त उवाच यत् ।
भवानेव तु मां प्रायो गर्दभोऽसीति भाषते ।।

अतस्तदनुचिन्त्याऽहम् एकमानीतवान् यतः ।
एकस्तु स्वयमेवाऽहं रासभत्वेन संस्मृतः ।।

छोटा सा भाषण हो

कहा एक छोटे बच्चे ने सुनिये पापा प्यारे! ।
होने वाली विद्यालय में है प्रतियोगिता हमारे ।।

इसीलिए छोटा सा भाषण हो पढ़ने में रुचिकर ।
मुझे भाग लेना है उसमें कृपया दे दें लिखकर ।।

बातें सुनकर पापा बोले कहो पुत्र! मम्मी से ।
वे भाषण में दक्ष लिखा लो भाषण तुम उन ही से ।।

बेटा बोला नहीं चाहिये दो घण्टे का भाषण ।
पाँच मिनट ही तो करना है मुझको उसका वाचन ।।

गधा दूसरा मैं हूँ

कभी पिता ने देवदत्त को ऐसा प्रश्न सुनाया ।
मैंने कहा दो गधे लाओ तू क्यों समझ न पाया? ।।

लाया एक गधा ही क्यों तू क्या है इसका कारण? ।
आज्ञा के विपरीत किया क्यों ऐसा कार्य विलक्षण? ।।

देवदत्त ने कहा पिता की ऐसी बातें सुनकर ।
मुझको आप पुकारा करते सदा गधा ही कहकर ।।

इसीलिए तो एक गधा ही ले करके मैं आया ।
गधा दूसरा खुद मैं ही हूँ यही समझ में आया ।।

निष्क्रियो योजनामन्त्री

एकदा यज्ञदत्तस्तु क्षुब्धः स्वतनयम्प्रति ।
देवदत्तमुवाचैवं तस्याऽऽचरणमिङ्गयन् ।।

विचारमेव मत्पुत्रः केवलं कुरुते सदा ।
कार्यं न कुरुते किञ्चित् सदोद्यमपराङ्मुखः ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तः स्मिताऽऽननः ।
मन्दं मन्दं विहस्यैवं यज्ञदत्तं जगाद यत् ।।

तत्र चिन्ता न कर्त्तव्या भविष्यत्समये स वै ।
देशस्य योजनामन्त्री भवेदिति न संशयः ।।

शुद्धं ददाति गौर्दुग्धम्

एकदा देवदत्तस्तु तनयम्प्रश्नमाह यत् ।
गो-गोपालकयोर्मध्ये कः प्रशस्यतरः स्मृतः? ।।

पितुस्तत्प्रश्नमाकर्ण्य दशवर्षीय आत्मजः ।
किञ्चिद् विचारयंस्तत्र पितरम्प्रत्युवाच यत् ।।

पशुर्यद्यपि गौरस्ति किन्तु सा श्रेयसी यतः ।
शुद्धं ददाति गौर्दुग्धं गोपस्तु जलमिश्रितम् ।।

उपनेत्रेण पश्यामि

सोपनेत्रं शयानं वै दृष्ट्वा वृद्धं पितामहम् ।
पौत्रः प्राहोपनेत्रं तद् उत्तार्य सुप्यतामिति ।।

पौत्रम् ऊचे तदा वृद्धो मम नेत्रे सुदुर्बले ।
उपनेत्रं विना स्वप्नाः शक्यन्ते नाऽवलोकितुम् ।।

केवल योजना बनाता

यज्ञदत्त ने देवदत्त से कहा दु:खी हूँ भाई ।
सत्य कहूँ मैं साथी मेरा पुत्र बड़ा दु:खदायी ।।

काम नहीं कोई करता केवल विचार ही करता ।
उसका यह आचरण निरन्तर मुझको खलता रहता ।।

उसकी बातें सुनकर के तब देवदत्त मुस्काया ।
बोला भाई ! यज्ञदत्त जी मुझे समझ में आया ।।

उसकी चिन्ता नहीं करें वह आगे स्वयं बढ़ेगा ।
कभी योजना मंत्री होकर जीवन सफल करेगा ।।

पानी बिना मिलाये

देवदत्त ने कहा पुत्र से बेटा मुझे बताओ ।
ग्वाला और गाय में अन्तर क्या होता समझाओ ? ।।

बेटा बोला देवदत्त की ऐसी बातें सुनकर ।
उसे बताया तब दोनों में जो होता है अन्तर ।।

पशु होकर भी सदा गाय से शुद्ध दूध हम पायें ।
किन्तु नहीं ग्वाला देता है पानी बिना मिलाये ।।

चश्मा बिना लगाये

चश्मा पहने सोते देखा कहा पौत्र ने नाना ! ।
क्यों चश्मा पहने सोते हो मुझको सत्य बताना? ।।

बोले नाना आँखे दुर्बल हैं क्या तुम्हें बतायें ।
सपनों को कैसे देखूँगा चश्मा बिना लगाये? ।।

वार्धक्ये नश्यति स्मृतिः

विरतं कारयन् पौत्रम् असत्यवचनात् तथा ।
पितामहोऽब्रवीदेवं प्रेरयन् सत्यभाषणे ।।

आयुर्व्यतीतमेतावत् न च किञ्चित् स्मरामि यत् ।
कदाचिज्जीवने चाऽस्मिन् असत्यं भाषितं मया ।।

पितामहस्य तद्वाक्यं श्रुत्वा पौत्रस्तु सस्मितः ।
अत्यन्तं विनयापन्नः पितामहम् उवाच यत् ।।

नैवाऽऽश्चर्यं किमप्यत्र यतो दीर्घायुषि स्मृतिः ।
प्रायशः क्षीणतां याति वृद्धानां तु भवादृशाम् ।।

स्वतन्त्रे भारते जातः

एकदा देवदत्तः स्वम् आज्ञोल्लङ्घन-तत्परम् ।
पुत्रं द्वादशवर्षीयं क्षुब्ध एवमुवाच यत् ।।

यदाऽहं त्वादृशोऽभूवम् पित्रोराज्ञां निरन्तरम् ।
पालने तत्परश्चाऽऽसम् भ्रातुराज्ञां तथैव च ।।

तादृशी न प्रवृत्तिस्ते न चाऽऽज्ञामिह कस्यचित् ।
त्वं पालयसि किं चाऽत्र कारणं ब्रूहि पुत्रक! ।।

पितुस्तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तसुतस्तदा ।
मन्दं विहस्य तातं स्वं वाक्यमेवम् उवाच यत् ।।

सम्पीडिते पराधीने संजातो भारते भवान् ।
स्वतन्त्रे भारते चाऽहं जात इत्येव कारणम् ।।

स्मरण शक्ति वृद्धों की

नाना जी ने कहा पौत्र से मानो मेरा कहना ।
कभी नहीं तुम झूठ बोलना सत्य मार्ग पर चलना ।।

मैंने झूठ कभी बोला हो मुझको याद नहीं है ।
इतनी बीती आयु हमारी सच बातें ही की हैं ।।

नाना जी की बातें सुनकर पौत्र तभी मुस्काया ।
ऐसा कहकर नाना जी को तब उसने समझाया ।।

है आश्चर्य न इसमें कुछ भी बात समझ में आती ।
स्मरण शक्ति वृद्धों की दुर्बल और क्षीण हो जाती ।।

मैं स्वतन्त्र भारत में आया

देवदत्त ने कभी क्षुब्ध हो करके पास बुलाया ।
आज्ञा नहीं मानने वाले बच्चे को समझाया ।।

जब मैं रहा तुम्हारे जैसा करता था अभिवादन ।
कर्तव्य समझता था अपना सबकी आज्ञा का पालन ।।

वैसी आदत नहीं तुम्हारी क्यों यह पुत्र बताओ? ।
आज्ञा नहीं मानने का तुम हेतु मुझे समझाओ? ।।

बातें सुनकर देवदत्त की पुत्र तभी मुस्काया ।
आज्ञा नहीं मानने का ऐसा कारण समझाया ।।

पराधीन भारत में पैदा आप हुए थे श्रीमन्! ।
मैं स्वतन्त्र भारत में आया मात्र यही है कारण ।।

जंगले नापिताऽभावः

एकदा देवदत्तस्तु तनयम्प्रश्नमाह यत् ।
भल्लूकस्य कथं देहे दीर्घाः केशाः प्रलम्बिताः? ।।

तच्छ्रुत्वा सप्तवर्षीयः पुत्रस्तम्प्रत्युवाच यत् ।
जङ्गले नापितो नाऽस्ति तस्माद् ऋक्षोऽस्ति केशवान् ।।

शिक्षयिष्यामि चात्मजान्

विवाहः सर्वदुःखानां मूलमाहुरतस्त्वया ।
विवाहो नैव कर्त्तव्य एवम् ऊचे सुतं पिता ।।

आकर्ण्य वचनं चैतत् पितृभक्तो नताननः ।
तनयः प्रत्युवाचेदं तदा गम्भीरया गिरा ।।

विवाहं न करिष्यमि कदाचिदपि जीवने ।
आत्मजानपि दास्यामि शिक्षामेनां सुदुर्लभाम् ।।

न कथं सदृशः पितुः ?

भवांस्तु बहुविख्यातः कविः साहित्यसर्जकः ।
पुत्रश्च भवतामेष कथं नाऽस्ति भवादृशः? ।।

प्रश्नमेनं समाकर्ण्य देवदत्तः स्मिताननः ।
प्रश्नकर्त्तारमालक्ष्य वाक्यमेवम् उवाच यत् ।।

पुत्रोऽयं मम संस्कारै र्नाऽभूत् प्रभावितो यतः ।
जन्माऽनन्तरमेतस्य प्रसिद्धिरर्जिता मया ।।

◆

किससे बाल कटाये ?

देवदत्त ने कभी पुत्र से कहा वत्स बतलाओ ।
बहुत बाल होते भालू के क्यों मुझको समझाओ? ।।

कहा पुत्र ने विवश बेचारा भालू बाल बढ़ाये ।
नाई नहीं वहाँ जंगल में किससे बाल कटाये? ।।

दुर्लभ शिक्षा

सभी दु:खों की जड़ है बेटा यह विवाह का बन्धन ।
कभी नहीं करना विवाह तुम हे मेरे सुखनन्दन! ।।

बोला बालक तभी पिता की ऐसी बातें सुनकर ।
आप करें विश्वास पिता जी आज्ञाकारी सुत पर ।।

शिक्षा मानूँगा जीवनभर शादी नहीं करूँगा ।
ऐसी दुर्लभ शिक्षा अपने बच्चों को भी दूँगा ।।

ख्याति मिली है मुझको

आप बड़े विद्वान् और साहित्यकार हैं भाई! ।
आप सदृश क्यों पुत्र नहीं यह बात समझ ना आई ।।

ऐसी बातें सुन करके तब देवदत्त मुस्काया ।
पुत्र भिन्नता का उसने ऐसा कारण समझाया ।।

नहीं प्रभावित कर पाया मैं संस्कारों से सुत को ।
उत्पत्ति के बाद ही इसके ख्याति मिली है मुझको ।।

●

व्यापार-विषयः

ब्रह्मचारी सदा सुखी

पुष्प-स्तबक-विक्रेता देवदत्तम् उवाच यत् ।
क्रीणातु कृपया पुष्पं प्रेमिकायै भवानिदम् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
न काऽपि प्रेमिका मेऽस्ति किमर्थं तन्नयाम्यहम्? ।।

ततः पुष्पस्य विक्रेता साग्रहं तमुवाच यत् ।
अस्तु तर्हि स्वभार्यायै पुष्पगुच्छं नयेद् भवान् ।।

देवदत्तस्तदा ब्रूते नैव नेष्याम्यहं यतः ।
अविवाहित एवाऽस्मि सखे! साम्प्रतमप्यहम् ।।

तच्छ्रुत्वा पुष्पविक्रेता दीर्घं निःश्वस्य सत्वरम् ।
सम्बोधयन् देवदत्तम् एवं वाक्यमुवाच यत् ।।

त्वमेव पुरुषश्चाऽसि संसारे सर्वतोऽधिकः ।
प्रसन्नः सुखसम्पनः सौभाग्य-श्री-समन्वितः ।।

अत एव हि सस्नेहं पुष्पस्य स्तबकं त्विदम् ।
निःशुल्कमेव हे मित्र! तुभ्यमेव समर्पये ।।

व्यापार-विषय

अविवाहित सुख में हैं

विक्रेता ने देवदत्त को दिखलाकर गुलदस्ता ।
कहा प्रेमिका को देने के लिए खरीदें सस्ता! ।।

बातें सुनकर देवदत्त बोला मैं सत्य बताऊँ ।
नहीं प्रेमिका कोई मेरी क्यों इसको ले जाऊँ? ।।

विक्रेता ने कहा ठीक है जो भी आप बतायें ।
फिर भी अपनी पत्नी ही के लिए इसे ले जायें ।।

बातें सुनकर देवदत्त ने कहा नहीं ले सकता ।
अविवाहित हूँ भला किसलिए ले जाऊँ गुलदस्ता ।।

ऐसी बातें सुनते ही तब खुला बुद्धि का ताला ।
बोला देवदत्त से ऐसा फूल बेंचने वाला ।।

इस दुनियाँ में सबसे ज्यादा सुखी तुम्हीं हो प्यारे ।
तुम्हें देखकर सफल हो गये दोनों नेत्र हमारे ।।

ऐसे महापुरुष के दर्शन से मैं हुआ प्रभावित ।
इसीलिए निःशुल्क तुम्हें गुलदस्ता करूँ समर्पित ।।

वेतनं कस्य लभ्यते ?

अभियन्ता तु वै कश्चित् दक्षः कार्येषु सर्वदा ।
कार्यालये च गत्वा स स्वामिनं स्वनियोजकम् ।।

ययाचे वेतने वृद्धिं यदा स्वामी तदैव तम् ।
विहसन्नभियन्तारम् एवं प्रत्युक्तवान् मुहुः ।।

षट् पुत्राणां पिता श्रीमान् देवदत्तस्तु वर्त्तते ।
ततश्चाऽप्यधिकं किन्तु वेतनं लभते भवान् ।।

नियोजकस्य तद्वाक्यम् आकर्ण्य तत्क्षणं तदा ।
अभियन्ता सुदक्षः स स्वामिनं प्रत्युवाच यत् ।।

कार्यालये समुत्पादः क्रियते तस्य वेतनम् ।
अस्माभिः प्राप्यते यद् वा यः समुत्पादितो गृहे? ।।

कार्यालयेऽपि निष्क्रियाः

राज्यकार्यालयस्यैकः कर्मचारी स्वके गृहे ।
चायपानं प्रकुर्वाणः पत्रिकापठने रतः ।।

बहुकाले व्यतीते च तस्य पत्नी जगाद यत् ।
गमिष्यति भवान् अद्य किं न कार्यालयेऽधुना? ।।

तस्यास्तद् वचनं श्रुत्वा विस्मितः स उवाच यत् ।
मया तु ज्ञातमेतद् यत् स्थितः कार्यालयेऽस्म्यहम् ।।

नियुक्तौ संस्तुतिर्मुख्या

साक्षात्कारं चतुर्वारं तस्मिन्नेव पदे यदा ।
दत्त्वा श्रीदेवदत्तस्तु पञ्चमं वारमागतः ।।

चयनसमितेश्चाऽपि सदस्यैरपि तत्र च ।
तेषामेव हि प्रश्नानाम् आरम्भः प्रकृतः पुनः ।।

देशस्य राजधानी क्व? कश्चित्तं पृष्टवान् यदा ।
देवदत्तस्तु निश्चिन्तः 'प्रयाग' इति चोक्तवान् ।।

तच्छ्रुत्वा ते सदस्याश्च सहसा तं ब्रुवन्ति यत् ।
राजधानीमपि त्वं तु देशस्य नैव वेत्सि किम्? ।।

तत्प्रश्ने देवदत्तस्तु सदस्यान् निजगाद यत् ।
किं 'दिल्ली' कथनेनाऽत्र नियुक्तिर्भविता मम? ।।

पूर्वमपि चतुर्वारं साक्षात्कारे मया सदा ।
दिल्लीति कथितं किन्तु न साफल्यमवाप्तवान् ।।

जो वेतन सरकारी

कहीं योग्य अभियन्ता कोई कार्यालय में आया ।
अधिकारी से आने का अपना उद्देश्य बताया ।।

बोला वेतन वृद्धि करें हे स्वामी! आप कृपा कर ।
ऐसी बातें सुनकर बोला अधिकारी वह हँसकर ।।

छः पुत्रों के पिता यहाँ श्री देवदत्त जी रहते ।
उनसे तो ज्यादा ही वेतन तुम्हें यहाँ पर मिलते ।।

अधिकारी की बातें सुनकर अभियन्ता वह बोला ।
क्षुब्ध हृदय हो देवदत्त के बारे में मुँह खोला ।।

फैक्ट्री में उत्पादन करते उसका धन पाते हैं ।
अथवा घर में उत्पादन का हम वेतन पाते हैं? ।।

क्या करते आफिस में ?

कोई राज्य कर्मचारी था अपने घर में बैठा ।
पीते हुए चाय पत्रिका बड़े ध्यान से पढ़ता ।।

हुई देर पत्नी ने देखा हुआ उसे भ्रम भारी ।
कहा नहीं जाना क्या आफिस छुट्टी आज तुम्हारी? ।।

सुनकर बातें आश्चर्य से कहा कर्मचारी ने ।
मैं तो समझ रहा था बैठा हूँ अपने आफिस में ।।

क्या रहस्य है इसमें ?

चार बार साक्षात्कार से भी न हुआ निर्वाचन ।
हुआ पाँचवी बार उसी पद का फिर से विज्ञापन ।।

चयन समिति वालों ने फिर से वही प्रश्न दुहराया ।
देवदत्त को तभी किसी ने ऐसा प्रश्न सुनाया ।।

कहो राजधानी स्वदेश की कौन यहाँ कहलाये ।
बतलाया उसने 'प्रयाग' है तभी बिना घबराये ।।

ऐसा सुनकर सभी वहाँ पर तेजी से चिल्लाये ।
अरे! राजधानी का भी तुम नाम नहीं कह पाये? ।।

ऐसा सुनकर देवदत्त जी बोले करके विनती ।
क्या दिल्ली कह देने से मेरी नियुक्ति हो सकती? ।।

चार बार साक्षात्कार में यही कहा था मैंने !
किन्तु सफल हो सका नहीं मैं पहले निर्वाचन में ।।

पत्नीभक्तस्तथैवाऽहम्

भृत्यस्तु स्वामिनम्प्राह मम पत्नी जगाद यत् ।
याचितव्या त्वया वृद्धिर्वेतने स्वामिनः पुरः ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा स्वामी तम्प्रत्युवाच यत् ।
अहं चाऽप्यत्र सन्दर्भे पत्नीं प्रक्ष्यामि स्वगृहे ।।

महत्त्वं ते तदा मतम्

क्वचित् चायालये गत्वा देवदत्तस्त्वथैकदा ।
एवं चायाऽऽपणस्याऽथ स्वामिनं वाक्यमाह यत् ।।

नीत्वा तु रूप्यकं चायं कोऽपि पाययितुं क्षमः ।
पायय त्वं विना मूल्यं वैशिष्ट्यं ते तदा मतम् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा स्वामी चायालयस्य सः ।
कपपात्रं तदा रिक्तं निधाय तत्पुरोऽब्रवीत् ।।

सचायं कपपात्रं तु सर्व एव पिबन्ति वै ।
पिब त्वं रिक्तपात्रेण महत्त्वं तेऽपि तन्मतम् ।।

चतुरोऽहं बली तथा

एकदा द्वारपालानां साक्षात्कारे नियोजकः ।
निरीक्ष्य निपुणं चैकं प्रत्याशिनमुवाच यत् ।।

दौवारिकाणां वृत्त्यर्थं सबलाश्चतुरास्तथा ।
अपेक्षिता युवानो मे किं त्वं योग्यः प्रवर्त्तसे? ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रत्याशी स जगाद यत् ।
चातुर्ये सबलत्वे च योग्योऽहं सर्वथा यतः ।।

बहिस्तिष्ठन्ति शतशः साक्षात्काराय मानवाः ।
तान् सर्वान् निरपास्याऽहं प्रथमोऽत्र समागतः ।।

पूछूँगा पत्नी से

नौकर बोला मालिक से यह करते हुए निवेदन।
पत्नी कहती कहूँ आपसे आप बढ़ायें वेतन ।।

ऐसी बातें सुनकर के तब मालिक बोला ऐसे।
ध्यान रहेगा पूछूँगा मैं भी अपनी पत्नी से ।।

महापुरुष तब मानूँ

चाय पिलाने की दुकान में देवदत्त जी आये।
आकर बोले विक्रेता से कृपया मुझे बतायें ।।

पैसा लेकर तो हर कोई चाय पिलाता सबको।
बिना मूल्य के चाय पिलाओ श्रेष्ठ कहूँ मैं तुमको ।।

देवदत्त की ऐसी बातें विक्रेता वह सुनकर।
बोला देवदत्त के आगे तब खाली कप रखकर ।।

सभी चाय से भरा हुआ कप पीते हैं यह जानूँ।
खाली कप पीकर दिखलाओ महापुरुष तब मानूँ ।।

सबसे पहले आया

द्वारपाल के इण्टरव्यू में प्रत्याशी जब आया।
उसे देखते ही अधिकारी ने यह प्रश्न सुनाया ।।

द्वारपाल के लिए सबल हो चतुर चाहिये मुझको।
उसके लिए योग्य हो सकते कैसे समझूँ तुमको ।।

ऐसी बातें सुनकर के वह प्रत्याशी मुस्काया।
मैं ही शक्ति निपुणता से सर्वथा योग्य समझाया ।।

प्रत्याशी सैकड़ों खड़े हैं जो लाइन में बाहर।
उन्हें हटाकर सबसे पहले आया स्वयं यहाँ पर ।।

कुलीना ददते स्वयम्

भृत्यां तु स्वामिनी प्राह मासेऽस्मिन् किं च कारणम् ।
पारिश्रमिकमद्याऽपि स्वकीयं न त्वयाचत? ।।

तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा सेविका प्रत्युवाच यत् ।
कुलीनां महिलां नाऽहं याचे वृत्तिधनं क्वचित् ।।

तस्यास्तदुत्तरं श्रुत्वा स्वामिनी प्रत्युवाच यत् ।
यदि कोऽपि न ते दद्यात् तदा त्वं किं करिष्यसि? ।।

तच्छ्रुत्वा सेविका प्राह सा कुलीना न वर्त्तते ।
इति निश्चित्य तां चाऽहं याचे वृत्तिधनं तदा ।।

प्रदातुः स्थितिसूचकः

एकदा भिक्षुकः कश्चिद् देवदत्तमुवाच यत् ।
ददातु कृपया मह्यं दश कार्षापणान् प्रभो! ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तस्तमब्रवीत् ।
दश कार्षापणैः किं स्यादधिकं किं न याचसे? ।।

तच्छ्रुत्वा याचकस्तत्र देवदत्तं जगाद यत् ।
दायकस्य स्थितिं दृष्ट्वा याचना मे प्रवर्त्तते ।।

स्वविभागेऽप्यविश्वासः

डाक-तार विभागस्य पत्र-वितरको यदा ।
त्रिंशद्वर्षस्य पश्चात् स सेवानिवृत्तिमाप्तवान् ।।

तदा तस्य विभागस्था अधिकारिण एकदा ।
सेवासमाप्तिमालक्ष्य समारोहे प्रवर्तिते ।।

तमाहुर्यत्त्वमेकं स्वं कथयाऽनुभवं निजम् ।
विशिष्टा काचिदिच्छा वा नः पुरस्तान्निवेदय ।।

तेषां तद्वचनं श्रुत्वा पत्र-वितरकस्तदा ।
विरम्य क्षणमुद्विग्न एवं वचनमाह यत् ।।

भवन्तः कृपया मह्यं डाक-द्वारा कदापि न ।
सेवा-निवृत्तिवित्तं मे प्रेषयन्त्विति कामना ।।

कुलटा से क्या माँगू ?

कहा मालकिन ने जब ऐसा किसी नौकरानी से ।
बीता एक महीना माँगा क्यों न बताओ पैसे? ।।

कहा नौकरानी ने तत्क्षण सत्य सदा मैं कहती ।
नहीं किसी कुलवन्ती से मैं कभी याचना करती ।।

ऐसी बातें सुन मालकिन ने तब पूछा ऐसे ।
क्या करती हो कोई महिला अगर न देती पैसे? ।।

बोली वह निश्चित ही उसको तब मैं कुलटा मानूँ ।
और पुनः मैं खुद ही उससे अपना पैसा माँगू ।।

दाता के अनुसार याचना

देवदत्त से किसी भिखारी ने यह किया निवेदन ।
बड़ा दुःखी हूँ कृपया मुझको दस पैसे दें श्रीमन् ।।

ऐसा सुनकर देवदत्त का मन करुणा से जागा ।
बोला दस पैसे क्या होता अधिक नहीं क्यों माँगा? ।।

देवदत्त की बातें सुनकर बोला तभी भिखारी ।
दशा देखकर दाता की होती याचना हमारी ।।

नहीं डाक से पेंशन

डाकतार वाले विभाग में पोस्टमैन के पद पर ।
करके तीस वर्ष की सेवा कोई हुआ रिटायर ।।

अधिकारी गण के प्रयास से तभी हुआ आयोजन ।
उक्त विदायी समारोह में उससे किया निवेदन ।।

अन्तिम वक्त पोस्टमैन जी निज अनुभव बतलायें ।
यदि कोई इच्छा विशेष हो निःसंकोच सुनायें ।।

बड़े कष्ट से पोस्टमैन वह ऐसी बातें सुनकर ।
बोला बड़ी खिन्नता से धीरे-धीरे रुक-रुक कर ।।

आप सभी से करना है मुझको बस यही निवेदन ।
कृपया नहीं डाक से भेजें कभी हमारी पेंशन ।।

वधूः पूर्वं प्रदर्श्यताम्

एकदा देवदत्तस्तु कस्मिंश्चिदापणे स्वयम् ।
विशिष्टं सूचनापट्टं दृष्टवान् यत्र चाऽङ्कितम् ।।

''वैवाहिकानां वस्तूनां सर्वेषामेव विक्रयः ।
विधीयतेऽत्र'' दृष्ट्वा तत् तत्र स समुपागतः ।।

आपणाऽभिमुखं दृष्ट्वा तमापणिक उक्तवान् ।
उष्णीषं माल्यकं यद् वा सज्जायुक्ते उपानहौ ।।

विशिष्टं कुरतावस्त्रम् अश्वं वा सुविभूषितम् ।
किं भवन्तोऽत्र वाञ्छन्ति? कृपया कथयन्तु माम् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
त्वं तु पूर्वं वधूमेव कृपया दर्शयस्व माम् ।।

प्रातरुत्थापयेद् भृत्याम्

देवदत्तगृहे कश्चित् भाटकाऽऽवासवान् नवः ।
यदा समागतस्तं च देवदत्त उवाच यत् ।।

सेविका मम प्रातस्त्वां प्रत्यहं पञ्चवादने ।
उत्थापयेत् किमेतत् त्वं यदि चेच्छसि मां वद ।।

तच्छ्रुत्वा भाटकाऽऽवासी देवदत्तमुवाच यत् ।
न हि भो! स्वयमेवाऽहं जागर्मि पञ्चवादने ।।

तस्योत्तरं समाकर्ण्य देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
यद्येवं तर्हि भृत्यां मे प्रातरुत्थापयेद् भवान् ।।

प्रमत्तानां विचित्रता

आत्मानं गान्धिनं चैव मन्यमानं तु रोगिणम् ।
पृष्टवान् एकदा क्षुब्धो मनोरोगचिकित्सकः ।।

त्वया कथमिदं ज्ञातं यत् त्वं गांधीति वर्त्तसे? ।
तदा मत्तोऽब्रवीत् यन्मां गांधीजी प्रोक्तवान् स्वयम् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा सहसा तं चिकित्सकम् ।
समीपस्थः प्रमत्तोऽन्यो मनोरोगी जगाद यत् ।।

असत्यमेव ब्रूतेऽसौ यतो नैव कदाप्यहम् ।
तथा हि प्रोक्तवान् एनम् आत्मानं मन्यते यथा ।।

पहले वधू दिखायें

जब बोर्ड लगा कोई दुकान में देवदत्त ने देखा ।
चमकी उसके अन्तर्मन में शुभ-विवाह की रेखा ।।

वैवाहिक चीजों के खातिर कृपया यहाँ पधारें ।
पढ़कर देवदत्त को दिन में दिखने लगे सितारे ।।

देखा देवदत्त को बोला विक्रेता वह झुककर ।
पगड़ी दे दूँ या विवाह की वर माला दूँ सुन्दर ।।

कलापूर्ण वैवाहिक कपड़े या जूतों का जोड़ा ।
अथवा दे दूँ आप बतायें शुभविवाह का घोड़ा? ।।

क्या-क्या वस्तु चाहिए कृपया आप हमें बतलायें ।
देवदत्त जी बोले मुझको पहले वधू दिखायें ।।

नौकरानी को जगाइये

आया था किरायेदार नया कोई घर लेने,
कहा देवदत्त जी ने कृपया बताइये ।
मेरी नौकरानी यदि रोज सुबह पाँच बजे,
आपको जगाये ऐसा सहयोग चाहिये? ।।

ऐसी बातें सुनते ही बोला वह किरायेदार,
पाँच बजे खुद जागूँ कष्ट न उठाइये ।
उसकी ये बात सुन कहा देवदत्त जी ने,
ऐसा है तो मेरी नौकरानी को जगाइये ।।

कैसे कैसे गान्धी ?

कोई पागल सदा मानता था अपने को गान्धी ।
डाक्टर ने वैज्ञानिक ढंग से तभी भूमिका बाँधी ।।

पूछा तुम गान्धी हो कैसे? सुनकर पागल बोला ।
गान्धी जी ने स्वयं कहा था इस रहस्य को खोला ।।

सहसा वहीं दूसरा कोई पागल तब चिल्लाया ।
जिसने झूठ बोलने का उस पर आरोप लगाया ।।

बोला इसको कहीं न मैंने गान्धी कभी कहा है ।
डॉक्टर साहब! सत्य कहूँ यह मिथ्या बोल रहा है ।।

वैद्य एव दिवंगतः

हृद्रोगपीडितस्तावद् देवदत्तस्त्वथैकदा ।
चिकित्साभवने यस्मिन् दिने चाऽसौ प्रवेशितः ।।

तस्मिन्नेव दिने तस्य सौभाग्यात् लटरीधनम् ।
रूप्याणां दशलक्षाणाम् उद्घोषितमथाऽभवत् ।।

हृदाघातवशादेषा महाहर्षप्रदायिका ।
सूचना देवदत्ताय सर्वथा परिवर्जिता ।।

किञ्चित् स्वास्थ्ये च सम्प्राप्ते चिकित्सक उवाच यत् ।
श्रुतं सहस्त्ररूप्याणां लाटरी निःसृता तव ।।

तच्छ्रुत्वा देवदत्तस्तं चिकित्सकमुवाच यत् ।
यद्येवं तर्हि रूप्याणामर्धं तुभ्यं प्रदास्यते ।।

किञ्चित् काले व्यतीते च वैद्यस्तम्पुनरब्रवीत् ।
सखे! दशसहस्त्राणां लाटरीधनमस्ति तत् ।।

देवदत्तस्तदाकर्ण्य पुनरेव तमब्रवीत् ।
मया पञ्चसहस्त्रं तु तदा तुभ्यं प्रदास्यते ।।

किञ्चित्कालस्य पश्चात्स वैद्यस्तम्पुनरब्रवीत् ।
यदि ते लक्षरूप्याणि स्युस्तदा किं करिष्यसि? ।।

तदाप्यहं ध्रुवं तुभ्यम् अर्धं तद् लाटरीधनम् ।
प्रदास्यामीति नैवाऽत्र सन्देहं कुरुतां क्वचित् ।।

ततश्चिकित्सकस्तस्मै सूचनां सत्यमाह यत् ।
वस्तुतो दश लक्षाणां लाटरी तव निःसृता ।।

तच्छ्रुत्वा देवदत्तस्तु चिकित्सकमुवाच यत् ।
यद्येवं पञ्च लक्षाणि दास्यन्ते रूप्यकाणि ते ।।

वैद्यस्तु तत्समाकर्ण्य महाहर्षप्रभावितः ।
तत्क्षणं हृदयाघातम्प्राप्य मृत्युमवाप्तवान् ।।

डॉक्टर स्वर्ग सिधारे

दिल का दौरा पड़ते ही श्री देवदत्त मुरझाये ।
साथी सभी उठाकर उनको अस्पताल में लाये ।।

ठीक उसी दिन खुली लाटरी देवदत्त की भारी ।
हुये तभी दस लाख रूपये पाने के अधिकारी ।।

डाक्टर बोला उचित यही है इसको अभी छिपायें ।
बड़े हर्ष की बात हृदय रोगी को नहीं बतायें ।।

थोड़ा स्वास्थ्य लाभ होने पर डाक्टर ने बतलाया ।
एक हजार का पुरस्कार है नाम तुम्हारे आया ।।

देवदत्त ने कहा महोदय वादा रहा हमारा ।
यदि यह बात सत्य है तो आधा रूपया तुम्हारा ।।

और समय कुछ बीत गया तो पुनः डाक्टर बोला ।
दस हजार की खुली लाटरी इस रहस्य को खोला ।।

ऐसा सुनकर देवदत्त ने बात वही दोहराई ।
पाँच हजार तुम्हें मैं दूँगा निश्चित मेरे भाई! ।।

और समय कुछ बीत गया तो फिर से बोला डाक्टर ।
एक लाख की खुली लाटरी तो क्या होगा प्रियवर! ।।

देवदत्त ने कहा मिलेगा उसका आधा पैसा ।
कहता हूँ मैं सत्य यहाँ सन्देह झूठ का कैसा? ।।

कहा चिकित्सक ने तब उसको सत्य सूचना देकर ।
खुली लाटरी मौज करो दस लाख रूपये लेकर ।।

बातें सुनकर देवदत्त जी बोले होकर हर्षित ।
ऐसा है तो पाँच लाख मैं तुमको दूँगा निश्चित ।।

पाँच लाख सुनते ही डाक्टर गिरे वहीं बेचारे ।
शीघ्र हृदय गति रुक जाने से तत्क्षण स्वर्ग सिधारे ।।

रात्रौ किं करवाण्यहम्

रोगी चिकित्सकं प्राह स्वरोगं विनिवेदयन् ।
निशि निद्रा न चाऽऽयाति भैषज्यं कुरुतां भवान् ।।

रोगिणो वचनं श्रुत्वा वैद्यः स सस्मिताऽऽननः ।
प्रत्यूचे विहसन् मन्दं रोगिणं तदिदं वचः ।।

अरे! जीवनमेतत् तु कार्यार्थम् एव निर्मितम् ।
परं त्वं शयनं कृत्वा व्यर्थं तत् कुरुषे कथम्? ।।

वैद्यस्य वचनं श्रुत्वा रोगी किञ्चिद् विचारयन् ।
चिकित्सकमुवाचेदं मुहुः गंभीरया गिरा ।।

चौर्यं कर्त्तुं न जानामि भित्तिच्छेदं न वा तथा ।
पुनस्तत् किं करिष्यामि जागरित्वा त्वहं निशि? ।।

सीमेन्टं नैव प्राप्यते

सीमेन्टस्य नवा फैक्ट्री योजनायां प्रतिश्रुता ।
तस्याऽभावं निराकर्त्तुं यथाशीघ्रं प्रयत्नतः ।।

दुःखमेतत् परं तावद् वर्त्तते महदत्र यत् ।
फैक्ट्री-भवननिर्माणे सीमेन्टं नैव लभ्यते ।।

परस्परं भावयन्तः

सूचनापट्टके तावत् स्वामिना भोजनालये ।
द्वारस्थे सूचना चैषा ग्राहकान् प्रति लेखिता ।।

सम्मान्या ग्राहकाः! यूयं यदि नाऽत्राऽऽगमिष्यथ ।
बुभुक्षितौ भविष्यावो ध्रुवम् आवाम् उभावपि ।।

रात बिताऊँ कैसे ?

बतलाया रोगी ने आकर कभी किसी डाक्टर को ।
निद्रा नहीं रात में आती दवा दीजिए मुझको ।।

बातें सुनकर के रोगी की वह डाक्टर मुस्काया ।
हँसते हुए तभी रोगी को उसने यही सुनाया ।।

जीवन होता कार्य के लिए इसे न तुमने जाना ।
क्या सोकर चाहते बताओ इसको व्यर्थ गँवाना? ।।

बातें सुनकर के डाक्टर की वह रोगी बेचारा ।
बोला डाक्टर साहब मैं हूँ यहाँ भाग्य का मारा ।।

नहीं जानता सेंध काटना और न चोरी करना ।
व्यर्थ रहेगा मुझे रात भर स्वयं जागते रहना ।।

सीमेन्ट कहाँ से पायें

सरकारी मन्त्रालय को जब बात समझ में आई ।
सीमेन्ट कमी को पूरा करने तब योजना बनाई ।।

निर्धारित हो गया यहाँ कि फैक्ट्री नयी लगायें ।
दु:ख यही पर भवन हेतु सीमेन्ट कहाँ से लायें? ।।

दोनों भूखे जायें

किसी भोजनालय के बाहर मुख्य द्वार पर ।
आयें ग्राहक बोर्ड लगाया था विचार कर ।।

हे मेरे सम्मान्य ग्राहको! आप यहाँ पर आयें ।
अगर नहीं आते तो दोनों ही भूखे रह जायें ।।

महद् आश्चर्यमाप्तवान्

मन्दिराद् बहिरागत्य नवीने मदुपानहौ ।
द्वारे सुरक्षिते दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

नववर्ष-समारोहे, नृत्यन्तीं मल्लिकामहम् ।
वस्त्रैः परिवृतां दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

थानास्थाने तु सम्प्राप्ते तत्र पुलिसकर्मिणाम् ।
उत्कोचे विरतिं वीक्ष्य महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

सम्प्राप्य स्टेशने चाऽहं ट्रेनयानं समागतम् ।
नियते समये दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

निर्वाचने पराजित्य बाहुवित्त-बलान्वितम् ।
जेतारं निर्धनं दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

बम्विस्फोटाभियोगे तु क्रूरमातङ्कवादिनम् ।
कारायां भारते दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

मान्यं मन्त्रिपदं लब्ध्वा भ्रष्टाचार-पराङ्मुखम् ।
नेतारं सात्त्विकं दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

सैन्यतन्त्रं तिरस्कृत्य लोकतन्त्राभिनन्दनम् ।
पाकिस्ताने यदा दृष्टं महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

मासस्य प्रथमा नास्ति तिथिः किन्तु गृहाऽऽगते ।
भार्यां मन्दस्मितां दृष्ट्वा महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

जनवर्यास्तु षड्विंशे दिनाङ्के राष्ट्रियं ध्वजम् ।
मदर्सायां यदा ऽपश्यं महदाश्चर्यमाप्तवान् ।।

हुआ अचम्भा भारी

मन्दिर से जब निकला देखा दरवाजे पर बाहर ।
जूते नये सुरक्षित दोनों हुआ अचम्भा पाकर ।।

नववर्ष के उत्सव पर मल्लिका नाम की नारी ।
कपड़े पहने नृत्य कर रही हुआ अचम्भा भारी ।।

थाने में जब गया वहाँ पर पुलिस जनों को देखा ।
घूस न लेता जान माथ पर थी अचरज की रेखा ।।

गया रेलवे स्टेशन पर ठीक समय पर गाड़ी ।
देखा आते हुए वहाँ तो हुआ अचम्भा भारी ।।

निर्वाचन में बाहुबली वैभवशाली नेता को ।
इक निर्धन ने हरा दिया तो हुआ अचम्भा मुझको ।।

बम विस्फोटों का अभियोगी क्रूर दुष्ट आतंकी ।
जेल गया जब भारत में तो हुई अचम्भित झाँकी ।।

माननीय मन्त्री पद पाकर भ्रष्टाचार विमुख हो ।
सात्त्विक नेता को देखा तो क्यों न हमें अचरज हो ।।

दूर हटा फौजी शासन को लोकतन्त्र अपनाता ।
देखा पाकिस्तान देश तो मैं अचरज में आता ।।

वेतन की तारीख न थी फिर भी जब मैं घर आया ।
मुस्काती पत्नी देखी तो मित्र अचंभित पाया ।।

लहराते छब्बीस जनवरी एक तिरंगा प्यारा ।
कहीं मदरसे पर देखा तो अचरज का मैं मारा ।।

सौकर्यं याचने भवेत्

एकदा भिक्षुकः कश्चित् सखायं भिक्षुमाह यत् ।
यदि ते लाटरी-लाभो भवेत् तत्किं करिष्यसि? ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा सखा तम्प्रत्युवाच यत् ।
एकं स्कूटरयानं तु प्रथमं क्रेष्यते यतः ।।

पदातिना महत्कष्टं भिक्षायामधिगम्यते ।
स्कूटरेण तु सौकर्यं याचने सम्भविष्यति ।।

गंगामातुरियं कृपा

ददाति तव गौ दुग्धं केवलं लीटरद्वयम् ।
विक्रीणासि कथं तावत् तदा त्वं लीटरत्रयम्? ।।

क्रेतुः प्रश्नमिमं श्रुत्वा गोपालः प्रत्युवाच यत् ।
गंगामातुः कृपा सर्वा तत्प्रभावेण सिध्यति ।।

ऋणं प्रति ददामि ते

यदैकदा सखायौ तु गच्छतः स्म क्वचित् तदा।
निर्जने कानने केचिद् दस्यवः समुपागताः ।।

दस्यून् वीक्ष्य सखा त्वेको योऽधमर्णो बभूव वै ।
उत्तमर्णाय मित्राय तत्रैव सहयात्रिणे ।।

दत्त्वा पञ्चशतं तस्मै रूप्याणि स तदाऽब्रवीत् ।
सखे! यत्तु पुरा नीतं धनं प्रतिददामि तत् ।।

कार्य बड़ा सुखदायी

कहा भिखारी ने अपने भिक्षुक साथी से ऐसे ।
अगर लाटरी खुली तो कैसे खर्च करोगे पैसे? ।।

ऐसी बातें सुनकर के तब बोला मित्र भिखारी ।
मुझको स्कूटर खरीदना लगता बहुत जरूरी ।।

भीख माँगता पैदल चलता थक जाता हूँ भाई ! ।
स्कूटर से हो सकता है यह कार्य बड़ा सुखदायी ।।

गंगा मैया का प्रताप है

दो लीटर ही दूध बताओ देती गाय तुम्हारी ।
लीटर तीन बेंचते कैसे हो ग्वाले बनवारी? ।।

सुनकर के यह प्रश्न किसी का ग्वाले ने बतलाया ।
कृपा करें गंगा मैया तो सब होवे समझाया ।।

मुक्त कीजिए ऋण से

कभी कहीं दो साथी घर से यात्रा पर थे निकले ।
जंगल में प्रवेश करते ही कुछ डाकू सामने मिले ।।

साथी के रुपये पाँच सौ थे उधार साथी पर ।
उसे चुकाने का सूझा तब उसको अच्छा अवसर ।।

कहा रूपये जो बाकी थे लौटाता हूँ उनको ।
लेकर यह अब मुक्त कीजिये कृपया ऋण से मुझको ।।

हानिस्ते पूरयिष्यते

ग्राहकः कश्चिदागत्य पत्रकार्यालये यदा ।
प्राह सम्पादकं क्रुद्धस्तत्र साक्रोशया गिरा ।।

पत्रिका प्रेष्यते यस्मिन् सङ्केते तत्र नाम्नि मे ।
द्विवेदो लिख्यते नित्यं त्रिवेदश्च भवाम्यहम् ।।

एवम् एकस्य वेदस्य प्रतिमासं तु वर्त्तते ।
या हानिस्तस्य दुःखं तु न भवान् ज्ञातुमर्हति ।।

ग्राहकस्य वचः श्रुत्वा सम्पादक उवाच यत् ।
नाऽग्रे हानिर्भवेद् एतद् अवधास्याम्यहं परम् ।।

या हानिरेकवेदस्य पुराऽभूद् अथ तत्कृते ।
तव नाम्नि चतुर्वेदं लिखित्वा पूरयिष्यते ।।

पुरा विकासकार्येषु

कश्चिन्नरः कार्यकर्त्ता परिवार-नियोजने ।
दशानां तनयानां तु जनकः समवर्त्तत ।।

यदा कश्चिदपृच्छद् यत् कथं ते वंशवर्धनम् ।
नियोजनविभागेऽपि भूत्वा तावदिदं महत्? ।।

तदा स प्रत्युवाचैवम् इतः पूर्वमहं सखे! ।
विकासस्य विभागेषु नियुक्तः सर्वदाऽभवम् ।।

वार्धक्यं कथम् एकस्मिन्

एकस्मिन्नेव पादेऽथ कश्चिद् वृद्धः पितामहः ।
पीडया दुःखितस्तावद् वैद्यराजम् उपागतः ।।

निरीक्ष्य तं नरं शीघ्रं वैद्यराजो ब्रवीति यत् ।
वृद्धावस्था-प्रभावेण केवलं कष्टमस्ति तत् ।।

वैद्यस्य वचनं श्रुत्वा वृद्धः स पुरुषस्तदा ।
महदाश्चर्यम् आध्याय सविस्मयम् उवाच यत् ।।

उभयोः पादयोरेव समानाऽऽयुर्मतं परम् ।
कथं केवलमेकस्मिन् पादे वृद्धत्वम् आगतम्? ।।

●

घाटा पूर्ण करूँगा

कभी पत्रिका-ग्राहक कोई कार्यालय में आया।
आकर सम्पादक को उसने यह साक्रोश सुनाया।।

बोला जो पत्रिका महोदय मुझको प्रेषित करते।
मैं हूँ यहाँ त्रिवेदी, कैसे आप द्विवेदी लिखते?।।

एक वेद की हानि मुझे प्रतिमाह उठानी पड़ती।
क्यों ऐसा करते हैं मुझको यही बात है खलती।।

ग्राहक की बातें सुनकर सम्पादक बोला तत्क्षण।
आगे हानि नहीं होगी विश्वास कीजिए श्रीमन्!।।

पहले एक वेद की जो भी हानि हुई है तुमको।
तुम्हें 'चतुर्वेदी' लिखकर के पूर्ण करूँगा उसको।।

था विकास में पहले

कहीं कर्मचारी कोई परिवार नियोजन वाला।
किन्तु स्वयं दस बच्चों का कहलाये पिता निराला।।

ऐसे कभी किसी ने पूछा मैं यह समझ न पाया।
हो परिवार नियोजन में कैसे परिवार बढ़ाया?।।

बोला आप ठीक कहते हैं पर यह बात समझ लें।
मैं विकास के ही विभाग में था नियुक्त इसके पहले।।

एक ही चरण में

पीड़ा एक पैर में थी जाँच के लिये गये थे,
वयोवृद्ध कोई वैद्यराज के सदन में।
देखा उन्हें भली भाँति वैद्यराज ने बताया
वृद्ध होने का प्रभाव आप के चरण में।।

बातें सुनी वैद्य की तो वयोवृद्ध बोले तभी,
होता आश्चर्य मुझे आप के कथन में।
दोनों की ही आयु में समानता है वैद्यराज!
आई वृद्धता कहाँ से एक ही चरण में?।।

●

यात्रादि-विषयः

दुर्लभाः सत्ययात्रिणः

ट्रेनस्य टिकटं नीत्वा कश्चिद् यात्री यदा पुनः ।
टिकट-दायकस्याऽग्रे गवाक्षे समुपागमत् ।।

तमुवाच स यन्मे त्वं गणयित्वा न दत्तवान् ।
रूप्यकाणि ततश्चाऽहं पुनरत्र समागतः ।।

यात्रिणो वचनं श्रुत्वा टिकटदायकोऽब्रवीत् ।
टिकट-ग्रहणे काले वाच्यमासीदिदं त्वया ।।

परं बहुविलम्बेन त्वमिहाऽसि समागतः ।
तस्मान्नैवाधुना किञ्चिद् भवितुमिह शक्यते ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा यात्री स तदनन्तरम् ।
टिकटदायकं तं च वाक्यमेवम् उवाच यत् ।।

अस्तु तर्हि यदेतत् त्वं पञ्चाशद् रूप्यकाणि मे ।
अधिकं दत्तवान् बन्धो! तन्मयैव सुरक्ष्यते ।।

दोषस्तव विभागस्य

टिकट-निरीक्षकः कश्चित् यदा ट्रेने समागते ।
कस्यचिद् यात्रिणो दृष्ट्वा टिकटं चैवमाह यत् ।।

टिकटं कलकत्तायास्तवेदं वर्त्तते तथा ।
मुम्बई-गामिनि ट्रेने कथं तिष्ठसि मां वद? ।।

तस्य तत्प्रश्नमाकर्ण्य यात्री स प्रत्युवाच यत् ।
परं ममाऽत्र को दोषः कृपया ट्रेनचालकम् ।।

भवान् प्रष्टुं हि शक्नोति न किन्तु पृच्छ्यते यतः ।
भवदीय-विभागस्य कर्मचारी स वर्त्तते ।।

यात्रादि-विषय

सच्चे यात्री दुर्लभ हैं

लेकर टिकट ट्रेन का यात्री फिर खिड़की पर आया।
आकर टिकट दिया था जिसने उसको यही बताया ।।

दिये मुझे रुपये आपने बिना ठीक से गिनकर।
आया हूँ मैं इसीलिए ही दोबारा खिड़की पर ।।

ऐसी बातें सुनकर बोला ट्रेन टिकट विक्रेता।
लेते समय टिकट कहना था क्यों न रुपये देखा? ।।

बहुत विलम्ब किया है तुमने व्यर्थ तुम्हारा आना।
अब कुछ संभव नहीं यहाँ से तुम्हें पड़ेगा जाना ।।

ऐसी बातें सुनकर बोला वह यात्री तदनन्तर।
ऐसा है तो आप महोदय सुनिये ध्यान लगाकर ।।

ये पचास रुपये अधिक जो दिये आपने मुझको।
नहीं आप यदि वापस लेते रख लेता हूँ उसको ।।

पक्ष उसी का लेंगे

कोई टी०टी० जैसे गाड़ी के डिब्बे में आया।
टिकट देखकर यात्री को उसने यह प्रश्न सुनाया ।।

कलकत्ता का टिकट तुम्हारा मुझे बताओ कैसे?।
बाम्बे जाने वाली गाड़ी में क्यों आकर बैठे? ।।

ऐसी बातें सुनकर यात्री ने तोड़ी खामोशी।
बोला मैं निर्दोष ट्रेन चालक है इसमें दोषी? ।।

आप पूँछ सकते हैं उससे किन्तु नहीं पूँछेंगे।
विभागीय होने से उसका आप पक्ष ही लेंगे ।।

सुखेन शयनं तदा

एकदा यज्ञदत्तस्तु देवदत्तमुवाच यत् ।
साम्प्रतं प्रत्यहं स्वप्नम् एकं पश्याम्यहं निशि ।।

कण्टका बहवस्तीक्ष्णा विचित्रा मम पादयोः ।
प्रविशन्ति न जाने ते कुतस्त्विति तु दुःखदम् ।।

तस्य वाचं समाकर्ण्य देवदत्तोऽपि दुःखितः ।
गंभीरया गिरा तत्र यज्ञदत्तमुवाच यत् ।।

यद्येवं तर्हि रात्रौ त्वं परिधाय स्वपादयोः ।
उपानहौ स्वकीये च सुखेन शयनं कुरु ।।

प्रमाणत्वे त्वमेव नः

देशयात्रां प्रकुर्वाणो देवदत्तस्त्वथैकदा ।
गतवान् स क्वचिद् द्रष्टुं प्रसिद्धं संग्रहालयम् ।।

पथप्रदर्शकस्तावत् कश्चित् तत्संग्रहालये ।
प्राचीनां दर्शयन् मूर्त्तिम् एकां प्रस्तरनिर्मिताम् ।।

तत्रस्थान् दर्शकान् सर्वान् सोत्सुकान् समुवाच यत् ।
सहस्त्रवर्षप्राचीना मूर्त्तिरेषा तु विद्यते ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवदत्तो जगाद यत् ।
न हि भो! नैवमस्त्यैतत् मूर्त्तिरेषा तु साम्प्रतम् ।।

पञ्चाधिक-सहस्त्रं हि वर्षाणि धारयत्यहो! ।
प्राचीनत्वे तदस्यास्तु सत्यं मद्वचनं भवेत् ।।

देवदत्तवचः श्रुत्वा विस्मितः स प्रदर्शकः ।
पृष्टवान् कुत एतावत् सत्यं ज्ञानं तवाऽऽगतम्? ।।

देवदत्तस्तदा ब्रूते पञ्चाऽब्दपूर्वमत्र माम् ।
त्वयैवोक्तम् इयं मूर्त्तिः सहस्राऽब्दपुरातनी ।।

जूते पहनें सोए

यज्ञदत्त ने देवदत्त को कष्ट सुनाया अपना ।
रोज रात में मित्र देखता हूँ मैं ऐसा सपना ।।

बड़े-बड़े तीखे काँटे वे जानें कहाँ से आते ।
तेजी से आकर के मेरे पैरों में चुभ जाते ।।

ऐसी बातें सुन करके तब देवदत्त घबराया ।
बोला बड़े धैर्य से साथी! मुझे समझ में आया ।।

इसका तो उपचार यही है जो हो सकता बेहतर ।
सुख से सोयें आप रात में जूते रोज पहनकर ।।

तुमने मुझे बताया

किसी संग्रहालय में सबको गाइड ने समझाया ।
एक पुरानी पत्थर की प्रतिमा सबको दिखलाया ।।

कहा दर्शको! यह प्रतिमा है इसकी यही कहानी ।
एक हजार वर्ष की है यह दुर्लभ मूर्ति पुरानी ।।

कहा किसी दर्शक ने उसकी ऐसी बातें सुनकर ।
अरे नहीं इतने वर्षों की मूर्ति पुरानी प्रियवर! ।।

एक हजार वर्ष से ज्यादा पाँच वर्ष है इसमें ।
करें नहीं सन्देह हमारे ऐसे सत्य कथन में ।।

दर्शक की बातें सुनकर के गाइड वह चकराया ।
बोला ऐसे सत्यज्ञान को कहाँ आपने पाया? ।।

दर्शक बोला पाँच वर्ष के पहले जब मैं आया ।
एक हजार वर्ष की तब भी तुमने मुझे बताया ।।

चित्तौड़-दुर्ग आगतः

बसयाने तु कस्मिंश्चित् मद्यपः पुरुषः क्वचित् ।
महाराणा-प्रतापोऽहम् इत्येवं घोषयन् निजम् ।।

सर्वान् स यात्रिणस्तत्र समुद्विग्नान् यदाऽकरोत् ।
प्रमत्त-भावमापन्नो महाराणात्वमाभजन् ।।

त्रस्तो बहुविधस्तत्र यानस्य परिचालकः ।
किञ्चिद् विचार्य तत्पार्श्वे सहसा प्राह सस्मितः ।।

अहो! चित्तोड़-दुर्गोऽयं समायातः समीपतः ।
उत्तिष्ठ बसयानात्त्वम् अवताराय सत्वरम् ।।

तस्य तां घोषणां श्रुत्वा प्रहृष्टः स तु मद्यपः ।
जनान् सर्वान् नमस्कृत्य बसयानाद् अवातरत् ।।

अहं खाद्यनिरीक्षकः

विश्वयात्रां प्रकुर्वाण एकदा देवदत्तकः ।
गतो भ्रान्तिवशादेव प्रदेशे नरभक्षिणाम् ।।

सहसैव तदा तत्र कश्चिदागत्य मानवः ।
स्प्रष्टुमारब्धवान् तस्य शरीराङ्गं यतस्ततः ।।

विस्मितो देवदत्तस्तद्विलोक्य क्षुब्धमानसः ।
पुरुषं तमवोचद् यत् त्वमेवं कुरुषे कथम्? ।।

तच्छ्रुत्वा स नरो ब्रूते मूढ़! तूष्णीं भवेः यतः ।
अस्मिन् क्षेत्रे नियुक्तोऽहं मुख्यः खाद्यनिरीक्षकः ।।

चित्तौड़ दुर्ग में राणा

बस में एक शराबी कोई जानें कहाँ से आया ।
बोला मैं राणा प्रताप हूँ लागों को धमकाया ।।

कंडक्टर भयभीत हुआ तब जन समूह थर्राया ।
राणाप्रताप का रण कौशल सबको उसने दिखलाया ।।

कुछ विचार कर गया पास वह बेचारा कण्डक्टर ।
डरा हुआ था किन्तु कहा उसने ऐसा कुछ हँसकर ।।

आ गया अरे! चित्तौड़ दुर्ग राणाप्रताप जी मिस्टर ।
उठें और घर जायें कृपया बस से यहीं उतरकर ।।

हर्षित होकर तभी शराबी ऐसी बातें सुनकर ।
जानें को तैयार हो गया बस से वहीं उतरकर ।।

मैं हूँ खाद्य निरीक्षक

यात्रा करते हुये विश्व की सहसा धोखा खाये ।
भ्रमवश नरभक्षी प्रदेश में देवदत्त जी आये ।।

तभी अचानक कोई मानव उनके सन्मुख आकर ।
छूने लगा देवदत्त के अंगों को सहलाकर ।।

उसके ऐसा करने पर तब देवदत्त घबराये ।
बोले क्या करते हो भाई! यहाँ कहाँ से आये ।।

ऐसा सुनते ही वह बोला चुप रह मतकर बक-बक ।
मम नियुक्ति है इसी क्षेत्र में मैं हूँ खाद्य निरीक्षक ।।

वञ्चका अपि यात्रिणः

यात्री तु स्टेशने कश्चिद् अपरिचित एकदा ।
कृतज्ञभावमापन्नो देवदत्तं ब्रवीति यत् ।।

भवानेवैकदा मह्यं दत्त्वा रूप्याणि वै शतम् ।
साहाय्यं कृतवान् नैतत् कदापि विस्मराम्यहम् ।।

देवदत्तस्तदा ब्रूते नाऽहं सर्वं स्मरामि तत् ।
अस्तु किं तानि रूप्याणि प्रत्यावर्तितुम् आगतः? ।।

तच्छ्रुत्वा स नरो ब्रूते नैवेदं विद्यते परम् ।
शतम् अन्यं ग्रहीतुं हि पुनरस्मि समागतः ।।

कथं कष्टं प्रदित्सति ?

जन-सम्मर्दयुक्ते तु रेलयानेऽथ चैकदा ।
कश्चिदारोढुकामो वै यात्री यत्नं यदाऽकरोत् ।।

याने स्थितस्तदा तत्र देवदत्तो ब्रवीति यत् ।
नेह स्थानं किमप्यस्ति कृपयाऽन्यत्र गम्यताम् ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा यात्री स प्रत्युवाच यत् ।
नैवोपवेष्टुम् इच्छामि पद्भ्यां स्थातुं हि कामये ।।

तदुत्तरं समाकर्ण्य यात्रिणस्तस्य वै तदा ।
संक्षुब्धो देवदत्तस्तु पुनरेवम् उवाच यत् ।।

यद्येवं तर्हि किं नैव बहिरेव हि तिष्ठसि ।
कथं याने समारुह्य नः कष्टं दित्सते भवान्? ।।

द्वितीयं नैव जानामि

प्रसिद्धौ द्वौ कवी तावद् यात्रायाम् एकदा यदा ।
सहसा संगतौ जातौ तदैकस्त्वन्यमाह यत् ।।

भवान् हि मन्यते कौचित् देशस्याऽस्य महाकवी? ।
इत्यहं ज्ञातुमिच्छामि भवदीयमुखेन वै ।।

तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य प्रथमस्त्वन्यमाह यत् ।
एकस्तु स्वयमेवाऽस्मि परम् अन्यं न वेद्म्यहम् ।।

यात्री ठग है कैसे ?

स्टेशन पर कभी अपरिचित यात्री कोई आया ।
देवदत्त को कृतज्ञता का उसने पाठ पढ़ाया ।।

बोला सौ रूपये दिये थे कभी आपने मुझको ।
याद रहेगा मुझे सर्वदा क्यों भूलूँगा उसको? ।।

देवदत्त ने कहा ठीक है नहीं तुम्हें पहचाना ।
क्या तुम चाह रहे हो अब मुझको पैसा लौटाना? ।।

बातें सुनकर देवदत्त की यात्री ने बतलाया ।
सौ रूपये और लेने के लिए यहाँ पर आया ।।

कष्ट हमें पहुँचायें

कभी ट्रेन में बड़ी भीड़ से जन समूह घबराया ।
फिर भी किसी तरह से कोई दरवाजे पर आया ।।

अन्दर बैठे देवदत्त जी बोले जगह नहीं है ।
किसी और डिब्बे में जाकर बैठें उचित यही है ।।

बातें सुनकर यात्री बोला यही मुझे है कहना ।
नहीं बैठना चाह रहा हूँ सिर्फ खड़ा ही रहना ।।

इतना कहकर शान्त हो गया यात्री जैसे-तैसे ।
होकर के संक्षुब्ध कहा तब देवदत्त ने ऐसे ।।

चलना नहीं खड़े रहना है तो बाहर ही जायें ।
गाड़ी में क्यों चढ़ करके फिर कष्ट हमें पहुँचायें? ।।

ना जानूँ दूजे को

दो प्रसिद्ध कवि मिले प्रेम से कभी कहीं यात्रा में ।
बोला एक दूसरे कवि से कृपया मुझे बतायें ।।

कौन यहाँ दो कवि हैं जिनको आप महाकवि मानें ।
यही जानने की इच्छा है हम कैसे पहचानें? ।।

उसकी बातें सुनकर बोला पहला कवि मुस्काता ।
मैं हूँ एक दूसरा कोई नहीं समझ में आता? ।।

भूमिं भोक्तुं न चाऽऽगताः

युद्धकाले तु संक्षुब्धाः सैनिकाः केचिदेकदा ।
सरोषभावमापन्नाः सेनानायकम् अब्रुवन् ।।

भोजनं दीयते यन्नस्तत्र च मृत्तिकाकणाः ।
प्राप्यन्ते बहवस्तन्न भोक्तुं तत् पारयामहे ।।

तेषां तद्वचनं श्रुत्वा स सेनानायकोऽपि तान् ।
प्रोवाच तत्र साक्रोशं भर्त्सयन्निव सैनिकान् ।।

मातृभूमेः सुरक्षार्थं ब्रूत! किमिह चाऽऽगताः ।
स्वादितुं भोजनं किं वा यूयमत्र समागताः? ।।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कश्चित् सैनिक आह यत् ।
रक्षार्थम् आगताः किन्तु न तां भोक्तुं समागताः ।।

सखायः सर्पसदृशाः

कदाचिदपि मित्रत्वे येनाऽद्यावधि कुत्रचित् ।
चायपानार्थमप्येकं मित्रं नैव निमन्त्रितम् ।।

साग्रहं दुग्धपानार्थं नयन्तं मित्रमण्डलम् ।
देवदत्तम् उवाचैवं सखा कश्चन विस्मितः ।।

कृपण! देवदत्त! त्वं ब्रूहि किं कारणं च यत् ।
निमन्त्रयसि मित्राणि दुग्धपानार्थम् अद्य वै? ।।

मित्राणां तद्वचः श्रुत्वा देवदत्तः सुधीस्तदा ।
मन्दं मन्दं विहस्यैवं मित्राणि प्रत्युवाच यत् ।।

हे मूढाः! किं न जानीध्वे दुग्धदानस्य कारणम्? ।
पुण्या तु तिथिरद्यैव वर्त्तते नाग-पञ्चमी ।।

●

नहीं भूमि का भक्षण

युद्धकाल में बड़े क्षोभ से सैनिक सब गुस्साये ।
क्रोधित होकर सेनापति को ऐसे वचन सुनाये ।।

भोजन मिलता है जो उसमें कंकड़ मिट्टी मिलते ।
सत्य कहें ऐसा भोजन हम कभी नहीं खा सकते ।।

उनकी बातें सुनकर सेना-नायक ने बतलाया ।
बड़े क्रोध से उन्हें तिरस्कृत करके यही सुनाया ।।

मातृ-भूमि की रक्षा ही आने का यहाँ प्रयोजन ।
आप बतायें क्या आये हैं करने सुन्दर भोजन? ।।

ऐसी बातें सुनकर बोला कोई सैनिक तत्क्षण ।
आये रक्षण हेतु भूमि का करें न इसका भक्षण ।।

नाग-पंचमी आई

किसी मित्र को कभी चाय भी जिसने नहीं पिलाया ।
देवदत्त कँजूस वहीं क्यों आज यहाँ पर आया? ।।

कैसे सबको दूध पिलाने का दे रहा निमन्त्रण ।
मित्रों में से किसी एक ने किया सवाल विलक्षण ।।

बता हमें कँजूस! आज ही क्यों तू दूध पिलाता? ।
इतना उदार हो गया कहाँ से नहीं समझ में आता ।।

मित्रों की बातें सुनकर के देवदत्त मुस्काया ।
धीरे-धीरे हँस-हँस कर मित्रों को यही सुनाया ।।

अरे! तुम सभी बड़े मूढ़ हो नहीं समझते भाई! ।
दूध पिलाने की पावन तिथि नाग-पंचमी आई ।।

●

कविः काव्यं पठिष्यति

प्रायोजिते त्वकादम्या कविसम्मेलने यदा ।
अङ्गवस्त्र-प्रदानेन कवयो बहु मानिताः ।।

परम् एकः कविस्तावदवशिष्टो यदाऽभवत् ।
अल्पीयस्त्वाद् अभावाद्वा वस्त्रं तस्मै न चार्पितम् ।।

सभायामथ तस्यां च किंकर्त्तव्यविमूढधीः ।
संस्कृताऽकादमी-मन्त्री विहसन्नेवमाह यत् ।।

अङ्गवस्त्रयुताः सर्वे शोभन्ते कवयः परम् ।
अनङ्गवस्त्रयुक्तोऽयं कविः काव्यं पठिष्यति ।।

करें काव्य का पाठ यहीं

संस्कृत-अकादमी द्वारा कवि-सम्मेलन था आयोजित ।
अङ्गवस्त्र देकर कवियों को किया गया सम्मानित ।।

अङ्गवस्त्र था किन्तु एक कम अतः एक को नहीं मिला ।
वस्त्र न पाने पर भी लेकिन उस कवि को थी नहीं गिला ।।

किंकर्त्तव्यविमूढ हुए पर आयोजक जब देख वहाँ ।
कवि के स्वागत में तब हंसकर सञ्चालक ने यही कहा ।।

अंगवस्त्र से शोभित कविगण गहन काव्यरस में पैठे ।
पर अनङ्गवस्त्री ये कवि भी काव्यपाठ करने बैठे ।।

●